ओ३म्

परिवार और समाज के नवनिर्माण का साहित्यिक मासिक

शांतिधर्मी

सितम्बर-2018

डॉ. भवानी लाल भारतीय : साहित्य के एक युग का अवसान

₹10

प्रकाशन का 20वां वर्ष

किनाना (जींद) में इण्डस ग्लोबल एकेडमी के अन्तर्गत डिफैंस एकेडमी के उद्घाटन के अवसर पर आयोजित हवन में मेजर सत्यपाल जी, सुभाष श्योराण जी, रचना श्योराण जी, प्रिं० अरुणा शर्मा, कर्नल रवि जी, प्रवीण परुथी आदि। एकेडमी का शुभारम्भ उपायुक्त श्री अमित खत्री जी के कर कमलों से हुआ।

महर्षि दयानन्द योग चिकित्सा आश्रम अर्बन एस्टेट जींद में मासिक वैदिक सत्संग में
स्वामी रामवेश जी के प्रवचन और श्री सहदेव शास्त्री के भजनोपदेश हुए।

रेवाड़ी जिले की ऊर्जावान आर्यसमाज बीकानेर गंगायचा अहीर का वार्षिकोत्सव। स्वामी आर्यवेश जी, स्वामी जीवानन्द जी, आचार्य सोमदेव जी, श्री सहदेव बेधड़क, कुलदीप भास्कर, बहन कल्याणी आर्या, पण्डिता धर्मरक्षिता महाशय हरिसिंह जी की गरिमामय उपस्थिति। श्री सहदेव समर्पित सम्बोधित करते हुए। श्री रामकिशन शास्त्री जी का कुशल मंच संचालन और डॉ० महेन्द्रजी, प्रो० धर्मवीर आर्य व अशोक आर्य आदि का कुशल संयोजन।

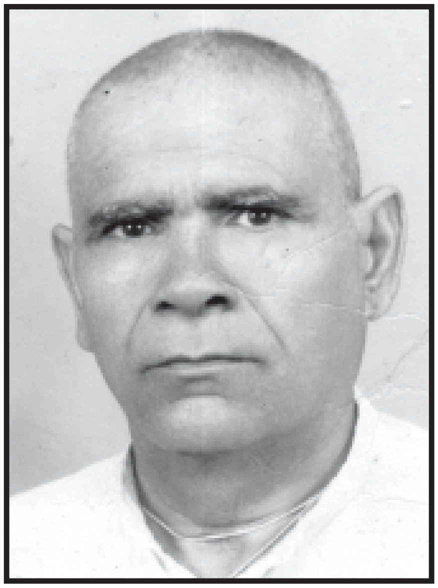

संस्थापक एवं आद्य सम्पादक

पं० चन्द्रभानु आर्य

सम्पादक : सहदेव समर्पित
(चलभाष 09416253826)
उपसम्पादक : सत्यसुधा शास्त्री
प्रबंध संपादक : सुभाष श्योराण
आदरी सम्पादक : यज्ञदत्त आर्य
सह-सम्पादक : राजेशार्य आट्टा
डॉ० विवेक आर्य
विधि परामर्शक : डॉ० नरेश सिहाग एडवोकेट
सहयोग : आचार्य आनन्द पुरुषार्थी
श्रीपाल आर्य, बागपत
महेश सोनी, बीकानेर
भलेराम आर्य, सांघी
कर्मवीर आर्य, रेवाड़ी
कार्यालय व्यवस्थापकः रविन्द्रकुमार आर्य
कम्प्यूटर सज्जा : बिशम्बर तिवारी

सहयोग राशि

एक प्रति	:	१०.०० रु०
वार्षिक	:	१२०.०० रु०
दस वर्ष	:	१०००.०० रु०

ओ३म्

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा।

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

शांतिधर्मी

सितम्बर, २०१८ ई०

वर्ष : २० अंक : ८ भाद्रपद २०७५ विक्रमी
स ष्टि संवत्-१९६०८५३११९, दयानन्दाब्द : १९५

क्या? कहाँ?....

आलेख

विवेक के द्वार (पुनर्प्रकाशन शांतिप्रवाह)	७
सामवेद अनुशीलन (पुकार)	८
डॉ० भवानीलाल भारतीय : एक युग का अन्त (श्रद्धांजली)	१०
वृद्धों को दिखाया वृद्धाश्रम का दरवाजा (श्राद्ध पक्ष)	११
वैदिक समाज में नारी का स्थान (नारी के अधिकारों का प्रश्न)	१३
ठाकुर बिशन सिंह मेडतिया : स्वतंत्रता संग्राम के योद्धा (वीर-गाथा)	१५
आर्यसमाज द्वारा मानव सेवा कार्य (इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ)	१७
अतीत को निहार लें, भविष्य को संवार लें (युवा मंच)	१८
योगष्वर कृष्ण : कुछ यक्ष प्रश्न	१९
कर्म से ही प्रारब्ध बनता है (दर्शन)	२०
अमृत पद प्राप्ति के चार साधन (आत्मिक उन्नति)	२२
प्राकृतिक चिकित्सा क्या है (स्वास्थ्य चर्चा)	२४

लघु-कथा/प्रसंग : पानी की टोंटी/शिवाजी के गुरु-२७
कविता : ९ (भारत को भारत रहने दो- राजेशार्य आट्टा) २८, ३४
स्थायी स्तम्भ : बाल वाटिका-२६, भजनावली-२८, बिन्दु बिन्दु विचार

Find us on: facebook
https://www.facebook.com/ShantidharmiHindiMasik

कार्यालय :
७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक,
जीन्द—१२६१०२ (हरियाणा)
दूरभाष : ९४१६२—५३८२६
ईमेल- **shantidharmijind@gmail.com**

पूर्ण सम्पादक मण्डल अवैतनिक है। पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचारों से सम्पादक मण्डल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी प्रकार के विवाद का न्याय क्षेत्र जीन्द होगा।

मनुष्य बनना क्या कठिन है!

❐सहदेव समर्पित

वेद का एक प्रसिद्ध आदेश है कि मनुष्य बनो। मनुष्य बनना तो कोई कठिन बात नहीं है, लेकिन यह सबसे जरूरी भी है। वेद ने जो मनुष्य बनने का उपदेश दिया वहीं इसके अर्थ भी बताए और मनुष्य बनने के स्वाभाविक उपाय भी बताए हैं। मनुष्य शरीर को प्राप्त कर लेना ही मनुष्य बनना नहीं है, बल्कि मनुष्य के स्वभाव को ग्रहण करना ही मनुष्य बनना है।

आज विश्व की जनसंख्या चाहे कितनी भी बढ़ रही हो, उसमें मनुष्यों की संख्या तो नगण्य ही है। आज दूसरे प्राणियों से या प्राकृतिक अपदाओं से उतने लोग नहीं मरते जितने मनुष्यों के मारने से मरते हैं। पर्यावरण प्रदूषित कर रहा है कौन? मनुष्य। पशुओं में संयम है लेकिन छोटी छोटी दुधमुंही बच्चियों से दुराचार कर पशुत्व करता है कौन? मनुष्य। आज संसार में जितनी भी समस्याएँ हैं, विचार कर देखिये उनमें से अधिकांश का कारण मनुष्य ही है। तो क्या इसका मनुष्य होना सार्थक है?

ऋषियों ने बताया मनुष्य होने का क्या अर्थ है- मत्वा कर्माणि सीव्यति- जो विचार कर कार्य करता है, जो विचार पूर्वक कार्य करता है। पशु जो केवल देखता है, मनुष्य जो विचारता भी है। यह विचार ही मनुष्यत्त्व का आधार है। मन में जो विचार है वह किसी को नहीं दीखता। मनुष्य के बोलने से पता चलता है कि उसके मन में क्या है! उसके व्यवहार से ज्ञात होता है कि वह कैसा सोचता है। जो मन में होता है, वाणी और व्यवहार से वही प्रकट होता है। इसलिए विचारों को शुद्ध और पवित्र रखना ही मनुष्य बनने का श्रेष्ठ और सरल उपाय है।

परमेश्वर ने मनुष्य को विचार की शक्ति दी है। यह विचार शक्ति मनुष्य को उठाती भी है और गिराती भी है। यह ताना बाना बड़ा उलझन भरा है। विचार हमारे कर्मों के बीज हैं और हमारे कर्मों से हमारे संस्कार भी बनते हैं। सो विचारकर कर्म करना और विचारों को पवित्र बनाए रखना- यानि मनुष्य बनना एक महत्त्वपूर्ण कार्य है।

कर्म ही हमारे अनन्त जीवन का आधार बनते हैं। कर्म के फल के संबंध में सब कुछ स्पष्ट है। हम प्रतिक्षण देखते हैं कि कर्म का फल मिलता ही मिलता है। फल कब मिलेगा, इसमें अन्तर हो सकता है, पर फल मिलता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। कर्म का जो प्रभाव हमारे मन पर पड़ता है, वह इस बात का प्रमाण है कि बीज बो दिया गया है। कोई फसल चार छः महीने में मिल जाती है, कोई साल दो साल में और कोई आठ दस साल में।

जब विचार ही हमारे जीवन का आधार हैं तो इनको सुधारना हमारा प्राथमिक कर्त्तव्य है। हमारे संकल्प पवित्र होंगे तो हमारा जीवन निरन्तर पवित्रता की ओर बढ़ेगा। हमारे संकल्प शुभ हों। हमारे विचार, संस्कार, चिन्तन पवित्र हों- हमारा पूरा प्रयास इस दिशा में होना चाहिए। यदि हम और सारे प्रयत्न करते हैं और केवल यही प्रयत्न नहीं करते तो हमारे जीवन में और कुछ हो जाए लेकिन हम सुख और शांति नहीं प्राप्त कर सकते। हमारे संकल्पों की दिव्य शक्तियों को पहचान कर ही हम दिव्य जीवन के अधिकारी हो सकते हैं।

पूरा का पूरा वैदिक दर्शन इस बात पर टिका हुआ है कि हमारे संकल्प, हमारे विचार शुद्ध और पवित्र कैसे हों। हमारे ऊपर जन्म-जन्मान्तरों के अनेक प्रकार के मल चढ़े हुए हैं। हमारी अनेक प्रकार की वृत्तियाँ (योग की भाषा में पांच) हैं, यह दुनिया तो एक बाजार है, जो कुछ हम खरीदेंगे वह मिल ही जाएगा। यदि हम अपने आप को वृत्तियों के अधीन छोड़ देंगे तो वे जहाँ चाहेंगी हमें ले जाएँगी। जहाँ हम जाना चाहते हैं -यदि हम वहाँ जाना ही चाहते हैं तो हमें अपनी वृत्तियों को अपने अधीन करना होगा। गाड़ी को चालक चलाएगा तभी तो वह गन्तव्य तक पहुंचेगा। यदि लक्ष्य का निर्धारण गाड़ी के अधीन छोड़ दिया गया तो वह तो वहीं ले कर जाएगी जहाँ वह जा सकती है। यह गाड़ी है, मैं चलाने वाला हूँ, यह समझना है। अविद्या है, मिथ्याज्ञान है तो दोष हैं, दोष हैं तो प्रवृत्ति है। प्रवृत्ति है तो जन्म है, जन्म है तो दुःख है।

योग किसलिए है- वृत्तियों को नियंत्रित करने के लिए। यज्ञ, सत्संग, स्वाध्याय किसलिए हैं- संकल्पों को, विचारों को शुद्ध और पवित्र बनाने के लिए। सारे के सारे आध्यात्मिक प्रयत्न विचारों को शुद्ध करने के लिए ही होते हैं। यदि धार्मिकता का लबादा ओढ़ भी लिया और विचारों में कार्यों में व्यवहार में कोई परिवर्त्तन नहीं आया तो समझें- धर्म के स्थान पर कुछ और किया जा रहा है। जो लोग तुच्छ मनोकामनाएँ पूर्ण करने के लिए भक्ति करते हैं वे बड़े भोले व्यापारी हैं। जिन चीजों से दूर होने के लिए भगवान के पास जाना चाहिए, वही चीजें मांगने के लिए भगवान के पास जा रहे हैं। भक्ति में वैभव का प्रदर्शन करके भक्ति नहीं की जा सकती। भक्ति के लिए गगनचुंबी मन्दिर की नहीं, शुद्ध और पवित्र मन की आवश्यकता है। चित्त की वृत्तियों को नियंत्रित करके अपने विशुद्ध स्वरूप को पहचान लेना ही तो योग है।

मनुष्य बनना कठिन तो नही है, पर इसके निरन्तर अभ्यास करते रहने की आवश्यकता होती है। ❐❐❐

आपकी सम्मतियाँ

सर्वोपयोगी प्रकाशन के माध्यम से सात्त्विकता के प्रचार का आपका बहुत अच्छा प्रयास है। प्रभु आपको सफलता प्रदान करें। हम समय-समय पर सहयोग करते रहेंगे।

devendrauppal@gmail.com

शांतिधर्मी पत्रिका का अंक ईमेल के माध्यम से मिला। बहुत-बहुत सुंदर अंक है। आपको व आपकी टीम को हार्दिक बधाई।

-ओम सपरा, दिल्ली omsapra@gmail.com

बहुत अच्छी पत्रिका है। विविधतापूर्ण, रोचक एवं ज्ञानवर्धक सामग्री है। आप बधाई के पात्र हैं कृपया मेरे पास पत्रिका नियमित भेजते रहें।

bhartsood@yahoo.co.in

आपकी पत्रिका का स्वरुप आकर्षक, विषय गंभीर व स्तुत्य प्रयास है। आज प्रचार की अत्यधिक आवश्यकता है। हर छोटे से छोटे संभव प्रयास का उत्साहवर्धन होना ही चाहिए। ठीक लिखा 'दीप की तरह अंधकार को चुनौती देना' ही प्रशंसनीय है। आज सरल भाषा में जीवनोपयोगी सामयिक लेखों की अधिक आवश्यकता है।

रवि देव गुप्ता

अध्यक्ष : एकल विद्यालय फाऊंडेशन ऑफ इण्डिया

संरक्षक : दक्षिण दिल्ली वेद प्रचार मण्डल

gupta.ravidev3@gmail.com

सुन्दर, ज्ञानवर्धक लेखों और सभी आयु वर्ग के पाठकों के लिये रोचक पठनीय सामग्री से सुसज्जित पत्रिका है। कोटि-कोटि शुभकामनाएं।

shwetketusharma@gmail.com

शांतिधर्मी अति उत्तम प्रेरक पारिवारिक पत्रिका है। सतत नियमित प्रकाशन और सबके लिये ग्राह्य बनाये रखने के लिए आपको भूरिशः साधुवाद

आचार्य सोमदेव, अजमेर

aryasomadev@gmail.com

बेटी बचाओ का नारा खोखला हो चुका है।
लगता है मानव अपनी मानवता खो चुका है।।
समाज में अश्लीलता बढ़ रही है।
कुकर्मों की सुई ऊपर चढ़ रही है।।
बलात्कार की खबरें अशांत करती हैं।
बेटियाँ घर से बाहर निकलने से डरती हैं।।
मानव न 'शांत' न 'धर्मी' रह गया है।
जीवन मूल्यों का पिटारा भी बह गया है।।
मानव बन कर रह गया है केवल अधर्मी।
उसे सही पथ पर ला सकता है केवल 'शांतिधर्मी'।।
इसलिये शांतिधर्मी पढ़िये और पढ़ाईये।
अपने बच्चों को संस्कारवान् बनाईये।।
ताकि हम कह सकें-
मैं बेटी का पिता हूँ - और समाज में गर्व से जीता हूँ।।

राजकुमार वर्मा प्रिंसिपल ईक्कस

पटियाला चौंक, जींद

अगस्त अंक हर बार की तरह रोचक, ज्ञानवर्धक, विचारोत्तेजक सामग्री से भरपूर है। राजेशार्य का आलेख 'धर्मान्तरण नहीं है समस्या का समाधान' में आज की ज्वलंत समस्या पर तर्कपूर्ण प्रकाश डालते हुए इसका समुचित समाधान प्रस्तुत किया है। यह सत्य है कि बात बात पर धर्म छोड़ने की धमकी देने वाले लोग धर्म के बारे में कुछ नहीं जानते और उन्होंने धर्म अपनाया ही कब है जो उसे छोड़ेंगे। अपने अधिकारों के लिये संघर्ष करने के और बहुत लोकतांत्रिक तरीके हैं। परन्तु वस्तुतः तो यह राजनैतिक शोशेबाजी है कि बंदर के दोष की गाय को सजा। अन्य उत्तम सैद्धान्तिक, सामाजिक, राष्ट्रीय विचारपरक लेखों के लिए साधुवाद! शांतिधर्मी इस प्रकार के चिन्तन की लोकप्रिय पत्रिका है और आप इसके स्तर को लगातार बनाये रखने में सफल हैं। अतः आपको पुनः पुनः बधाई।।

NTN प्रताप राव

प्रधान कार्यालय आर्य उप प्रतिनिधि सभा

ग्राम पो निरगुड़ी, त० बी कल्याण

जिला बीदर (कर्णाटक)-535331

शांतिधर्मी एक आदत सी बन गई है। १५ दिन के बाद ही नये अंक की प्रतीक्षा शुरु हो जाती है। पढ़कर मन को शांति मिलती है।

दशरथ राणा

लाल मन्दिर के पास, निगदू, जिला करनाल

शांतिधर्मी का अगस्त का बेहतरीन अंक मिला, धन्यवाद। मुखपृष्ठ पर रथ पर सवार कर्मयोगी श्रीकृष्ण तथा गांडीवधारी अर्जुन के युद्ध शुरू होने से पहले शंखनाद करते हुए चित्र मनमोहक लगे। आत्म-निवेदन में संपादकीय संस्कृति की रक्षा लाजवाब तथा प्रेरणादायक है। इस लाजवाब संपादकीय के लिए साधुवाद! स्वर्गीय पंडित चंद्रभानु आर्य उपदेशक का बेहतरीन लेख 'मन ही बंधन और मोक्ष का कारण' जानकारी बढ़ाने वाला तथा भवसागर पार कराने में सहायता करने वाला है। ज्ञानेन्द्र जी तथा श्री रमेशचंद्र श्रीवास्तव की काव्य रचनाएं पसंद आईं। राजेश आर्य आट्टा का लेख 'मतांतरण नहीं समस्या का समाधान' सायिक और प्रेरक है। सभी धर्मों (मतों) में अपनी अपनी सामाजिक समस्याएँ हैं। उनका समाधान जागरूकता से ही हो सकता है। अपने मां-बाप के खिलाफ हमें चाहे जितनी भी शिकायत हो, हम कभी भी उन्हें छोड़कर दूसरों के मां बाप को नहीं अपनाते। रामफल आर्य का लेख '११ आत्महत्या या हत्या' छद्म संतों/महंतों, पाखण्डियों का भाण्डा फोड़ करता है, जो अपने शिष्यों को गुमराह करके उनका सत्यानाश करते हैं। सीताराम गुप्ता का लेख 'कार्य कठिन नहीं होता कमजोर सोच होती है' मार्गदर्शक है। डॉ० मनोहरदास अग्रावत का लेख 'स्वस्थ आहार के स्वर्णिम सूत्र' उपयोगी है। बाल वाटिका में प्रकाशित हास्यम्, मनोरंजक पहेलियां दिमाग की कसरत करने वाली तथा विचार कणिका ज्ञानवर्धक है। डॉ० नरेश सिहाग का लेख मनुष्य के तीन मित्र पढ़कर मजा आ गया।

प्रो० शाम लाल कौशल 9416359045
मकान नंबर 975 बी, ग्रीन रोड, रोहतक 124 001

सम्मानित पाठकों से निवेदन है कि कृपया अपनी सम्मतियाँ, सुझाव, सूचनाएँ एवं रचनाएँ पंजीकृत डाक से या ईमेल अथवा व्हाट्स एप पर ही भेजें।
ईमेल : shantidharmijind@gmail.com
व्हाट्स एप नं० : 9996338552

अपनों से अपनी बात : शांतिधर्मी के पाठकों से निवेदन

सम्मान्य पाठकगण, यह आपके आत्मीय सहयोग से ही सम्भव हुआ है कि शांतिधर्मी नियमित प्रकाशन के २० वर्ष पूर्ण कर रहा है। यह हमारे लिये सन्तोष का विषय है कि आज इंटरनेट के युग में भी शांतिधर्मी देश भर में पढ़ा जा रहा है। विदेश में भी ऑनलाइन पाठकों का आशीर्वाद मिल रहा है। शांतिधर्मी के संस्थापक स्व० पिताजी श्री चंद्रभानु आर्य जी की नीतियों के अनुसार हमारा दृष्टिकोण भी अव्यवसायिक ही है। इसलिये इसका मूल्य भी न्यूनतम ही रखा गया है। विज्ञापन आदि के लिये भी हम कुछ प्रयास नहीं कर पाते हैं। पुनश्च सात्विकता का प्रचार ईश्वरीय कार्य है। यही इसकी निरन्तरता का रहस्य है। हम पूरी सावधानी से हर मास सभी पते जाँच कर पत्रिका डाक में प्रेषित करते हैं। कुछ पाठकों को पत्रिका नहीं मिल पाती है। इस समस्या से हम परिचित हैं। हम डाक विभाग को सुधार नहीं सकते हैं। तथापि आपसे निवेदन करते हैं कि-

१ एक स्थान पर १० या अधिक सदस्य होने पर किसी एक सदस्य के पास पैकेट रजिस्टर्ड डाक से भेजते हैं। इसका रजिस्टरी खर्च हम वहन करते हैं। रजिस्टरी और पैकिंग सहित यह लगभग ३००/- होता है। एक सदस्य का रजिस्टरी खर्च वहन करना हमारे लिये संभव नहीं है। यदि आपको अपनी प्रति साधारण डाक से नहीं मिल रही है और आप अपनी एक प्रति रजिस्टरी से मंगाना चाहते हैं तो अपने सदस्यता शुल्क में अतिरिक्त ३००/- जोड़कर भेजें। हम चाहेंगे कि आप आजीवन सदस्यता शुल्क भेजने की बजाय अपने आसपास के कम से कम दस सदस्यों का वार्षिक शुल्क भेजें। आपको एक वर्ष तक हर मास १० प्रतियाँ रजिस्टर्ड डाक से प्राप्त होंगीं। यह सहयोग कुछ पाठक कर भी रहे हैं।

२ २००४ से पूर्व के आजीवन सदस्यों को हम निरन्तर पत्रिका भेज रहे हैं। परन्तु उनसे हमारा प्रायः कोई सम्पर्क नहीं हो पा रहा है। उन्हें पत्रिका मिल रही है या नहीं, या उनके लिये इसकी कोई उपयोगिता भी है या नहीं? इसलिये उन मान्य पाठकों से प्रार्थना है कि अपने पते की पुष्टि हमारे ईमेल, व्हाट्स एप पर या फोन द्वारा शीघ्र करने का कष्ट करें। १५ वर्ष में बहुत परिवर्तन आ जाता है। कई महानुभाव निवास भी बदल लेते हैं। ऐसे में पते की पुष्टि न होने पर हमें पत्रिका भेजना बंद करना पड़ेगा।

३ इस सूचना के प्रकाशित होने के बाद से १०००/- दस वर्ष का शुल्क होगा, आजीवन नहीं।

आशा है आपका स्नेह बना रहेगा, और हम इस कार्य को और अधिक उत्साह से कर पायेंगे।

भवदीय **सहदेव समर्पित** सम्पादक

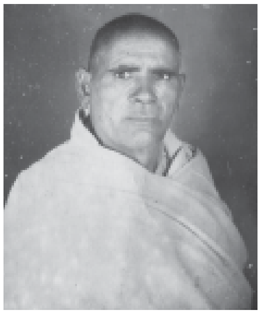

शांतिप्रवाह--- पुनर्प्रकाशन

मई २००४ अंक का सम्पादकीय

विवेक के द्वार

❑स्व० पण्डित चन्द्रभानु आर्योपदेशक, संस्थापक शांतिधर्मी

सत्य को जानने के उपाय तो विचार, बुद्धि और विवेक ही हैं। सब मनुष्यों का एक ही उद्‌देश्य है-आत्मवित् होना। सत्य सबके भिन्न- भिन्न नहीं हो सकते। स्वाध्याय, सत्संग, मनन-चिन्तन और स्तुति- प्रार्थना-उपासना से व्यक्ति के विवेक के द्वार खुल ही जाते हैं।

'इदमहमनृतात्सत्यगुपैमि।' मैं असत्य को छोड़कर सत्य को प्राप्त होता हूँ। 'असतो मा सद्‌गमय।' मुझे असत्/अनृत से सत् की ओर ले चलो। ये प्रार्थनाएँ मनुष्य के जीवन में सत्य के महत्व को इंगित करती हैं। सत्य न केवल मनुष्य के जीवन का आधार है, बल्कि संसार, यह सारा ब्रह्माण्ड भी सत्य पर ही टिका हुआ है- 'सत्येनोत्तभिता भूमिः।' 'न हि सत्या त्परम् धर्मः' सत्य सर्वोपरि धर्म है। इसलिए यह जाननीय, माननीय व आचरणीय है।

जिसके हृदय में सत्य के लिए जिज्ञासा जाग उठी, जिसका हृदय सत्य के लिए तड़प उठा-वही सत्य को ग्रहण कर सकता है। सत्य को ग्रहण करना और असत्य का त्याग करना-कहने सुनने में यह एक छोटी सी बात लगती है-लेकिन यह एक बहुत ऊँची स्थिति है। आत्म-कल्याण के पथिक के लिए तो यह पहली सीढ़ी है, जिसका आत्मिक स्तर ऊँचा उठा हुआ है, जिसका बुद्धि निर्मल है, वही व्यक्ति सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग कर सकता है। स्वामी दयानन्द के गुरु ने प्रथम परिचय में यही कहा था कि प्रथम प्राप्त असत्य को जल में बहा दो। सत्य को प्राप्त करने में असत्य का कूड़ा करकट बाधा है। सत्य का उत्कट जिज्ञासु इससे पार पाकर सत्य को प्राप्त कर लेता है।

उत्कट जिज्ञासा और निर्मल बुद्धि प्राप्त करने के लिए ईश्वर-कृपा निश्चित रूप से आवश्यक होती है। मुंशीराम नास्तिक थे। ऋषि दयानन्द ने उनकी सारी शंकाओं का समाधान कर दिया। कहा-महाराज, मेरी कोई जिज्ञासा शेष नहीं है, लेकिन ईश्वर पर विश्वास तो मुझे अब भी नहीं हो रहा है। इस पर महाराज ने कहा-मुंशीराम, मैं तो तुम्हारी शंकाओं का समाधान ही कर सकता था। ईश्वर पर विश्वास तो तुम्हें तब होगा-जब ईश्वर की कृपा होगी। ईश्वर की कृपा के बिना पात्रता नहीं आती।

पात्रता का अर्थ आत्मिक उन्नति ही है। हमारे हृदय पटल पर हमारी मान्यताओं, विचाराधाराओं के शक्तिशाली प्रभाव होते हैं, चाहे वे सत्य हों या असत्य। हम उनको सत्य ही स्वीकार करते हैं। वस्तुतः उस समय व्यक्ति के पास उस विचार को सत्य कहने का एकमात्र तर्क यही होता है कि यह मेरा है। सत्य को ग्रहण करने और असत्य को त्यागने में व्यक्ति के निजी स्वार्थ और अहंकार भी आड़े आते हैं। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश इन पांच प्रकार के क्लेशों से जीव पीड़ित हैं। **यथार्थ दर्शनम् ज्ञानम्** वस्तुस्थिति का ज्ञान होने पर ही जीव इन क्लेशों से छुटकारा पा सकता है।

भिद्यते हृदयग्रन्थि
छिद्‌यन्ते सर्वसंशाया।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि
तस्मिन्दृष्टे परावरे।।

मनुष्य अपनी न्यूनताओं की रक्षा करने के लिए- अपनी कमियों को छुपाने के लिये, सत्य का सामना करने की शक्ति न होने के कारण कभी 'श्रद्धा' शब्द का आश्रय लेता है तो कभी 'परम्परा' का। 'भीड़' के तर्क का आश्रय भी प्रायः लिया जाता है कि इतने लोग मान रहे हैं-क्या वे मूर्ख हैं। वस्तुतः ये तीनों ही सत्य और असत्य का निर्णय करने के साधन नहीं हैं।

❖सत्य और असत्य का निर्णय करने का साधन अधिक लोगों का एकत्र होना नहीं है- क्योंकि भीड़ के सभी व्यक्ति आत्म-विद्या के धनी नहीं होते। भीड़ को देखकर भी भीड़ जुड़ती है।

❖परम्परा उचित भी होती है और अनुचित भी।

❖श्रद्धा का तो कार्य ही सत्य को ग्रहण करने के पश्चात् प्रारम्भ होता है। क्योंकि सत्य रहित की जाने वाली श्रद्धा ही अश्रद्धा, अन्धविश्वास है।

सत्य को जानने और उसे ग्रहण करने के उपाय तो विचार, बुद्धि और विवेक ही हैं। सब मनुष्यों का एक ही उद्‌देश्य है-आत्मवित् होना, आत्मविद्या को ग्रहण करना। सत्य सबके भिन्न-भिन्न नहीं हो सकते। स्वाध्याय, सत्संग, मनन-चिन्तन और ईश्वर स्तुति-प्रार्थना-उपासना से व्यक्ति के विवेक के द्वार खुल ही जाते हैं। ❑❑❑

अनुशीलन   सामवेद : आग्नेय पर्व

पुकार

-लेखकः पं० चमूपति

तं त्वा गोपवनो गरा जनिष्ठवाने अंगिरः।
स पावक श्रुधी हवम्॥९॥२९

ऋषिः-गोपवनः-इन्द्रियों को पवित्र करने वाला, रक्षक का अभिलाषी।

(अंगिरः) हे अंगी अंगी में रमण कर रही है विश्व-याग की (अग्ने) आग! (गोपवनः) वाणी को पवित्र रखने वाला (तं त्वा) तुम्हारे उस तिरोहित तेज को (गिरा) वाणी द्वारा (जनिष्ठत्) प्रकाशित करता है। (सः पावक) हे उसकी आँखों से छिपी हुई पवित्र करने वाली अग्नि! (हवम्) उसकी पुकार को (श्रुधी) सुनियो।

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड एक महान् अंगी -एक सजीव संस्थान है। इसमें विद्यमान छोटे-बड़े संस्थान इस अंगी के अंग है। अपने-अपने स्थान पर ये छोटे-छोटे संस्थान भी अंगी हैं-जिनकी रचना उनसे भी छोटे-छोटे अंग के मिलने से हुई है। छोटे-छोटे अंग मिलकर एक महान् अंगी की सृष्टि कर रहे हैं-इसी का नाम यज्ञ है। जब तक कोई पदार्थ, अंग अथवा अंगी नहीं बन जाएगा, वह न तो देव-पूजा ही कर सकता है, न संगतिकरण और न ही दान। विश्व-याग की आग ये तीनों कार्य कर रही है। इसका कारण यह है कि उसकी क्रीड़ा अंगियों में है। उसके द्वारा अंग अंगी बन रहे हैं और अंगी अंग। कोई अवयवी अपने में पूर्ण नहीं है। वह अपने से महान् अवयवी का अवयव बन रहा है। यह करामात अग्नि-देव की है। अग्नि की विश्वव्यापिनी गति द्वारा ही, पृथक्-पृथक् सत्ता रखने वाले पदार्थ एक दूसरे में घुस जाते हैं-एक दूसरे के साथ एकीभूत हो जाते हैं। यह एकीभूत होना ही रमण है-क्रीड़ा है, देवताओं का देवतापन है।

यह देवतापन साधारणजनों की दृष्टि से तिरोहित रहता है। वे नहीं जानते कि अपनी पृथक्-पृथक् सत्ता रखने वाले व्यक्ति मिलकर किस प्रकार एक सामूहिक व्यक्तित्व का निर्माण कर लेते हैं? भिन्न-भिन्न प्राणियों की अलग-अलग आत्माएं हैं। इन आत्माओं के मेल से समाज की आत्मा का विकास कैसे हुआ? संजीव अंगों तथा अंगियों का मेल जड़ पदार्थों के मेल से सर्वथा भिन्न है। अंग तो फिर एक शरीर द्वारा मिल रहे हैं पर अंगियों का मेल बिना किसी शरीर के हो रहा है, आखिर इसका क्या कारण है?

मानव-समाज के इस अभौतिक सम्बन्ध की सबसे बड़ी प्रकाशक हमारी वाणी है। वाणी के सूत्र द्वारा मनुष्य मनुष्य के साथ एक विशेष रूप से बंध रहा है। वाणी के द्वारा ही मैं अपने हृदय के भावों का प्रकाश करता हूँ। एक हृदय दूसरे हृदय की बात को भाँप जाता है। एक हृदय की गूँज दूसरे हृदय में झट उठ खड़ी होती है। आत्मा की पहुँच आत्मा तक प्रायः वाणी ही के द्वारा होती है।

वाणियाँ व्यक्तियों की भी हैं, जातियों की भी। साहित्य, संगीत, कला, व्यवसाय, व्यापार-ये सब मानव समाज की भिन्न-भिन्न वाणियाँ हैं। इन्हीं के द्वारा मानव-समाज का यज्ञ अपने आप को एक सतत प्रदीप्त आग के रूप में प्रकट कर रहा है। यह आग आज एक जाति ने प्रज्वलित की है, तो कल दूसरी जाति ने। संस्कृति का संक्रमण एक जाति से दूसरी जाति में तथा एक देश से दूसरे देश में होता चला गया है।

मानव-संस्कृति का यह यज्ञिय-विकास तभी हो सकता है जब व्यक्ति तथा समाज अपनी वाणी को पवित्र रखें। साहित्य का, संगीत का, व्यवसाय का प्रवाह निर्मल बना रहे। प्रवाह का उद्‌देश्य संकुचित अथवा आचार-नाशक न हो। तभी मानव-जाति की आत्मा की आवाज यज्ञिय बन सकती है। तभी उससे आध्यात्मिक विकास की आग जलाई जा सकती है।

मानव-समाज अपनी इन उत्पादक कलाओं को जीभ बनाकर अग्निदेव को पुकार रहा है। विश्व-याग की पुनीत आग को निमंत्रण दे रहा है। सम्पूर्ण पृथिवी की सांस्कृतिक उन्नति का उद्‌देश्य यज्ञ की भावना को प्रेरित करना है। **अग्नि-देव! हमारी इस पुकार को सुनो। हमारे सीनों में आग लगा दो-परोपकार की, पर-पीड़ा हरण की, पर-स्वत्व-रक्षण की परम पुनीत आग! हमारे ज्ञान द्वारा कलाओं द्वारा, व्यवसाय द्वारा हमें आग सी लगा दो।**

हम 'गो पवन' पवन हों-वाणी का पवित्र प्रवाह चलाने वाले। हमारी संस्कृति के इस प्रवाह से यज्ञ ही की तिरोहित आग प्रकाशित हो। अंगियों को, जीवित समूहों को सुख देने वाली आग प्रकाशित हो। हमारी पुकार में सम्पूर्ण जीवन व्यापार में यज्ञाग्नि का वास हो। हम स्वयं अग्नि रूप हो जाएं। पुकार का वास्तविक सुना जाना तो है ही यही कि वह स्वयं सिद्धि बन जाए। हमारी पुकार ही एक आग हो जाए।

❑❑❑

भारत को भारत रहने दो!

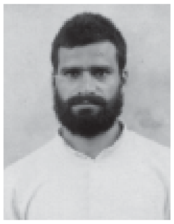

❑राजेशार्य आट्टा, पानीपत (हरि०) 9991291318

ठहरो इंडिया कहने वालो,
भारत को भारत रहने दो,
यदि भला चाहते हो अपना,
गंगा को सीधा बहने दो।

आर्यों की भूमि आर्यावर्त,
भरत से भारत कहलाया,
हिन्दुस्तान बना हिन्दु से,
इंडिया है फिरंगी की माया।

आर्यावर्त को पारसमणि,
ऋषि दयानन्द ने बतलाया था,
विश्व गुरु बनाने के हित,
विष कई बार पचाया था,

'मैं भारत हूं' कहने वाला,
रामतीर्थ संन्यासी था,
विवेकानन्द के लिए इसका,
कण-कण मथुरा काशी था।

भारत के लिए मंगल पांडे,
शोणित की भाषा बोला था,
नाना की बेटी मैनावती का
भी तो बासन्ती चोला था।

इसी माता के लिए हजारों,
हँसकर चढ़ गये फाँसी पर,
कितने वीर कुर्बानी दे गये,
मेरठ, ग्वालियर झाँसी पर,

तांत्या, कुंवर, नाना, बहादुर,
तुलाराम, झाँसी की रानी,
अपने सिरों की भेंट दे गये,
नाहर से अद्‌भुत बलिदानी।

रामसिंह कूका, बिरसा मूंडा,
कितने ही बलवन्त फड़के थे
जिनकी सिंह गर्जना सुन
दिल अंग्रेजों के धड़के थे।

'भारत भवन' बना श्याम ने
क्रांति देवी का किया आह्वान,
योगी अरविन्द मैडम कामा
से आये साधक वीर महान।

माँ का चीर हरण होता देख,
चापेकर बंधु बढ़े आगे,
मिस्टर रैण्ड को मार गिराया,
सोये वीर भारत के जागे।

माँ के लिए बहा चुके थे,
तिलक जो आँखों का पानी,
एक बूंद भी न शेष मिला
स्वर्ग सिधारीं जब उनकी रानी।

'भारत माता' दल को नेता,
थे अजीत सिंह सूफी प्रसाद,
अभिनव भारत सावरकर
का, माता का हरता विषाद।

सत्तावन के समर के लिए,
सावरकर ने उगली ज्वाला थी,
इसीलिए तो माता के हित,
सजी मुण्डों की माला थी।

दुश्मन के घर जा धींगड़ा ने,
दागी भारत की गोली थी,
हँसते-हँसते फाँसी चढ़कर,
जय भारत माँ की बोली थी।

कैसे कोई भूल पाएगा,
परमानन्द की दर्द कहानी,
माता की धुन में मस्त हुए,
पहुँचे वीर काला पानी।

इसी धुन में अजीत सिंह,
बरसों रहे वनवासी थे,
रास बिहारी, हरदयाल, पाल,
भी क्या कम संन्यासी थे।

शचीन्द्रनाथ ने इसी चमन
के पेड़ रक्त से सींचे थे,
प्रणवीर शपथ लेते जाकर
चित्तौड दुर्ग के नीचे थे।

अवध बिहारी करतार सराभा,
कन्हाई दत्त औ' काशीराम,
गैंदालाल, गणेशशंकर,
प्रफुल्ल चाकी से पुष्प ललाम।

विष्णु पिंगले, अमीरचन्द,
फाँसी चढे बसन्त विश्वास,
हार्डिंग पर बम दे मारा, करने
ब्रिटिश का समूल विनाश।

सतावन का दाग धो दिया,
बब्बर खालसा वीरों ने,
शोणित से किया तर्पण
माँ का, सोहन से रणधीरों ने।

भारत में शतबार जन्म के,
इच्छुक बिस्मिल लहरी थे,
खुदीराम अशफाक व रोशन,
इसके सजग प्रहरी थे।

साइमन भारत से जाओ,
यूँ पंजाब केसरी दहाड़ा था,
राजगुरु सुखदेव भगत ने,
ब्रिटिश का तख्त उखाड़ा था।

वीर आजाद ने रक्त बहाया
था, भारत माँ के पसीने पर,
शत्रु के सौ-सौ वार सहे,
अपने फौलादी सीने पर।

भगवती चरण दुर्गा भाभी,
बाल मुकुन्द से बलिदानी,
जिनके सुख माँ को अर्पित
थे, और हुई अर्पित जवानी।

गौरे-तिमिर के महानाश को,
सूर्यसेन चमका सूरज सा,
इन माँ के बेटों का दर्शन,
होता है मंदिर की मूरत सा।

खून के बदले लो आजादी
कह नेता जी हुँकारे थे,
जय हिन्द का लगा नारा,
लड़े माँ के राजदुलारे थे।

माँ की भक्ति में रंगे हुए,
वे पागल थे, दीवाने थे,
गौरे शत्रु से टकराने को,
वे हरदम सीना ताने थे।

भारत माँ के लिए ही गूँजा,
'वन्दे मातरम्' नारा था,
'अंग्रेजो भारत छोड़ो' यह
बच्चा बच्चा ललकारा था।

अगणित हीरे सजे हुए हैं,
माता की सुन्दर माला में,
उन भूलों का नमन करूँ मैं,
जो मिट गये वधशाला में।

देश पर मरने वाला वीर,
जय भारत माँ की बोला था,
हृदय में ज्वाला धधकी थी,
हर वीर बना बमगोला था।।

आजादी मिलते ही हमने,
वीरों की माँ को भुला दिया
लार्ड मैकाले के सपनों का,
भारत को इंडिया बना दिया।

इंडिया ले गया आजादी को,
बंदी अभी तक भारत है,
बिगड़ चुकी है भाषा-भूषा,
चरित्र हुआ यहाँ गारत है।

श्रम को तो सम्मान नहीं,
मॉडलिंग पर इनाम मिले,
इतिहासकारों ने गुल खिलाये
देशभक्त गुमनाम मिले।

धूल भरा हीरा है भारत,
इंडिया रहे आसमानों में,
भारत के तन पर फटे चीथड़े,
इंडिया विदेशी परिधानों में।

देह प्रदर्शन करती नारी,ऋषि
संस्कृति का कर उपहास,
काम शिक्षा की वकालत कर,
शिक्षा का किया सत्यानाश।

चील और कव्वे का भोजन,
खाने लगे इंडिया के लोग,
धर्म मोक्ष सब छूट गये,
सबको लगा पैसे का रोग।

भारत लड़ता आतंकवाद से,
इण्डिया करता समझौते,
यदि समय पर जाग जाते तो,
पाक के मालिक हम होते।

वह देश धरा से मिट जाता
है, भूले जो अपने बलिदान,
निज संस्कृति भाषा-भूषा का,
जिसको नहीं तनिक अभिमान।

इसीलिए कहता हूँ सुनलो-
ओ इंडिया के मतवालो!
भारत को भारत रहने दो,
घर में विषधर मत पालो।

युगों युगो से चलती आई,
धारा कभी न सूखेगी,
ऋषि संस्कृति के हत्यारो!
पीढ़ी तुम कर थूकेगी।

श्रद्धाञ्जली

डॉ0 भवानीलाल भारतीय : एक युग का अंत

❑डॉ० विवेक आर्य, सह सम्पादक

आर्यसमाज के शीर्ष विद्वानों में भारतीयजी का नाम सदा गिना जायेगा। उनके साथ प्रथम परिचय आज से २० वर्ष पूर्व उनकी पुस्तक 'आर्यसमाज के २० बलिदानी' द्वारा हुआ था। इस पुस्तक के माध्यम से मुझे उनकी लेखन-प्रतिभा के प्रथम बार दर्शन हुए। मैं अब उनके द्वारा लिखित पुस्तकों को पढ़ने के लिए तत्पर रहता। इसी शृंखला में मैंने नवजागरण के पुरोधा, स्वामी दयानन्द और स्वामी विवेकानंद तुलनात्मक अध्ययन आदि ग्रन्थ पढ़े तो मेरी यह मान्यता स्थापित हुई कि डॉ० भारतीय वर्तमान में स्वामी दयानन्द के जीवन चरित, सिद्धांत आदि विषयों के अधिकारी विद्वानों में से एक हैं। उस काल में उनकी आर्यजगत् साप्ताहिक में धारावाहिक रूप में 'आर्यसमाज के दिवंगत विद्वानों की लघु जीवनियाँ' प्रकाशित हुई थी। मेरे लिए यह अत्यंत लाभकारी था। बाद में भारतीयजी द्वारा रचित- चारों वेदों के मन्त्रों की व्याख्या, स्वामी दयानन्द की खरी-खरी बातें, श्यामजी कृष्ण वर्मा जी की जीवनी, सत्यार्थप्रकाश विषयक ग्रन्थ आदि पढ़े।

संस्थापक/सम्पादक स्व० श्री चन्द्रभानु आर्य जी से पुराने संबंधों के कारण डॉ० भारतीय जी की शांतिधर्मी पर विशेष कृपा रहती थी। उनके स्वामी दयानन्द विषयक साहित्य सृजन के इतिहास को लेख रूप में शांतिधर्मी में स्वर्गीय श्री चन्द्रभानु जी ने कई अंकों में प्रकाशित किया। इसी शृंखला में भारतीयजी ने इच्छा प्रकट की कि वे १९८३ में प्रकाशित 'नवजागरण के पुरोधा' को पुनः प्रकाशित कराने के इच्छुक हैं। जींद में मेरे पड़ौस में रहने वाले श्री अशोक गौतम जी ने इस विषय में शांतिधर्मी में पढ़कर तात्कालीन संयुक्त सम्पादक श्री सहदेव समर्पित से संपर्क किया। सम्पादक मण्डल में चर्चा के उपरान्त मैंने घूड़मल ट्रस्ट हिंडौन सिटी के श्री प्रभाकर आर्य जी से संपर्क किया। उनकी स्वीकृति पर एक लाख रुपया श्री अशोक गौतम जी एवं उनके परिवार द्वारा दानस्वरुप दिया गया, जिससे इस महान ग्रन्थ का पुनः प्रकाशन हुआ। इस छोटी सी भूमिका का पुण्य-लाभ मुझे यह मिला कि भारतीयजी से मेरा फोन द्वारा वार्तालाप आरम्भ हुआ। उन्होंने प्राचीन साहित्य से लेकर आर्यसमाज के विद्वानों के अनेक संस्मरण मुझे सुनाये। उनके मार्गदर्शन से मैंने आर्यसमाज के अनेक पुस्तकालयों का भी अवलोकन किया। २००९ में भूतपूर्व राज्यसभा सांसद डॉ० रामप्रकाश जी द्वारा मुझे ज्ञात हुआ कि दिल्ली में कुछ ईसाई पुस्तकालयों में आर्यसमाज से सम्बन्धित सामग्री है, जिसका मुझे अवलोकन करना चाहिए। मैंने कश्मीरी गेट के निकट स्थित कैंब्रिज लाइब्रेरी एवं ज्योति लाइब्रेरी का अवलोकन किया। भारतीय जी ने मेरा इस विषय में मार्गदर्शन किया। उन्होंने १९६५ में प्रकाशित पंडित महेशप्रसाद मौलवी आलिम फाजिल के लेख की प्रतिलिपि भेजी जिसमें स्वामी दयानन्द के संपर्क में आये प्रमुख ईसाई प्रचारकों के नाम और काल आदि का वर्णन था। सूची के आधार पर एवं इंटरनेट की सहायता से मैंने ईसाई पादरियों द्वारा या उनके विषय में लिखित पुस्तकों को खोजना आरम्भ किया। मुझे न केवल उनके द्वारा लिखी गई अनेक पुस्तकें मिलीं अपितु पादरी खड़कसिंह आदि के चित्र भी मिले। इस सामग्री को एकत्र कर मैं भारतीयजी के पास भेजता रहा। भारतीय जी ने अल्पसमय में इस सामग्री के आधार पर एक पुस्तक लिखी- 'स्वामी दयानन्द और ईसाई मत'। इस पुस्तक का प्रकाशन भी घूड़मल ट्रस्ट द्वारा किया गया। इसके लिये डॉ० दीनबंधु चन्दोरा जी ने मेरे अनुरोध पर अमरीका से अपने पुत्र की स्मृति में दान दिया। डॉ० भारतीय ने इस पुस्तक की भूमिका की पहली पंक्ति में लिखा कि इस पुस्तक की प्रेरणा मुझे डॉ० विवेक आर्य जी से मिली। मेरा नाम लिखकर भारतीय जी ने मुझे सम्मानित किया, यह उनका बड़प्पन था।

वे मेरे लेखों को पढ़कर फोन पर प्रतिक्रिया अवश्य देते एवं सराहना करते। आर्यसमाज की संगठनात्मक स्थिति से वे अत्यंत दुःखी रहते थे। पत्र-पत्रिकाओं में आलोचना आदि छपने पर वे मौन रहते। एक बार उनकी पत्नी ने मुझे इस सन्दर्भ में एक बात कही, जिसे मैं जीवन भर नहीं भूल सकता। जब भारतीय जी ने लिखना प्रारम्भ किया तो उनके साथी शिक्षक कहते- आप राजकीय बोर्ड के पाठ्यक्रम की पुस्तकें क्यों नहीं लिखते, आपको आर्थिक लाभ होगा। आर्यसमाज के लेखन से आपको कुछ नहीं मिलता। उलटा आपको अपनी ओर से व्यय करना पड़ता है। इस पर भारतीयजी ने कहा था- 'मेरी लेखनी केवल और केवल स्वामी दयानन्द के लिए चलेगी। यह बिकाऊ नहीं है।'

भारतीय जी का ऐसा महान चिंतन, उनके आदर्श हमें जीवन में सदा प्रेरित करते रहेंगे। मैं समझता हूँ कि उनके देहान्त से आर्यसमाज में साहित्य के एक युग का अवसान हो गया है। उनके सकारात्मक चिंतन का मेरे ऊपर विशेष प्रभाव आजीवन बना रहे। यही ईश्वर से प्रार्थना है। यही मेरी उनके प्रति श्रद्धांजलि है।

सामाजिक चिन्तन

पश्चिमी सभ्यता के घाट पर

वृद्धों को दिखाया वृद्धाश्रम का दरवाजा

❑पण्डित मनुदेव अभय विद्यावाचस्पति

यह देश का दुर्भाग्य है कि जिस देश में मृतकों को पानी और भोजन भेजने का पक्ष (पखवाड़ा) मनाया जाता हो, उसी देश में जीवित माता पिता को वृद्धाश्रम में धकेला जा रहा है।

मानव धर्मशास्त्र के प्रणेता महर्षि मनु के अनुसार हमारी संस्कृति में जीवात्मा को तथा उसे परिवार, समाज, राष्ट्र तथा विश्व के कल्याण के लिए उपयोगी बनाने हेतु गर्भाधान से भी पूर्व उसकी केवल मनुष्य ही नहीं, अपितु श्रेष्ठ मनुष्य बनाने की संकल्पना या प्रारूप निश्चित कर लिया जाता है। वैदिक संस्कृति में संतान उत्पत्ति कोई आकस्मिक घटना नहीं मानी जाती।

इस महानतम कार्ययोजना हेतु हमारे यहाँ आश्रम और वर्ण व्यवस्था का प्रावधान है। चार आश्रम हैं= ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ व संन्यास आश्रम। गृहस्थ आश्रम ही अन्य आश्रमों का मूलाधार है। इसी कारण इस आश्रम हेतु गुण, कर्म, स्वभाव तथा प्रवृत्ति के अनुसार ब्राह्मण (मास्टर माइंड) क्षत्रिय (मिलिट्री) वैश्य (मर्चन्द) तथा शूद्र (मिलियन्स) की व्यवस्था है। इस चारों विविध परिक्षेत्रों से विश्व की कोई भी सामाजिक रचना बाहर जा ही नहीं सकती है। हाँ, देश विशेष की भाषा के कारण इन चारों अंगों के नाम कुछ भिन्न हो सकते हैं। चाहे भाषा या बोली भिन्न हो, परंतु शाश्वत सत्य तो एक ही होता है। इसी प्रकार की व्यवस्था हमारे यहाँ की परिवार की व्यवस्था है। परिवार ही हमारे जीवन का पहला विद्यालय होता है, जिसमें हम बड़ों का अनुकरण करके जीवन के सूक्ष्म रहस्यों का प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं। समानता, सहअस्तित्त्व और सहयोग व सम्मान के दर्शन की आधारशिला परिवार पर ही टिकी हुई है।

आयु का तृतीय चरण स्वेच्छा से वानप्रस्थ ग्रहण कर आत्मचिंतन का स्वर्ण अवसर है। वर्तमान में बढ़ते हुए वृद्ध आश्रम हमारी श्रेष्ठ संस्कृति और सभ्यता को चिड़ा रहे हैं। पाश्चात्य संस्कृति और सभ्यता भारतीय समाज को पतन की ओर ले जा रही है। वृद्धों को देव पुरुष मानने वाला यह भारत कहाँ जा रहा है, यह चिंता का विषय है। समाज शास्त्रियों को इसका निदान कर उपचार करना होगा।

इतनी सुंदर परिवार तथा समाज रचना वाले देश में जब हम समाज विकास के नाम पर परिवारों का विघटन तथा चतुर्थ आश्रम अर्थात् वृद्धों की उपेक्षा का वातावरण देखते हैं तब मन अत्यंत दुःखी हो जाता है। परिवार में जहाँ माता-पिता अपना दायित्त्व अत्यंत गंभीरतापूर्वक निर्वाह करते हैं, वहीं परिवार के वयस्क बूढ़े दादा-दादी, माता-पिता पितामह-पितामही परदादा परदादी प्रकाश स्तंभ के तुल्य वर्तमान संतति को आगे बढ़ने एवं ऊंचे उठने का मार्ग दर्शाते हैं। संयुक्त परिवार का आनंद, परिवार में बच्चों की किलकारियां, दादा-दादी, नाना-नानी के गले में बच्चों का झूलना तथा उनके कंधों पर बैठना कितना आनंद दायक होता है, ऐसा हर्षातिरेक भुक्तभोगी ही अनुभव कर सकता है। यह आनन्द अनुभव तो किया जा सकता है, किंतु वाणी में व्यक्त नहीं किया जा सकता। ज्यों गूंगा गुड़ के स्वाद का उल्लेख नहीं कर सकता।

पुत्र को सन्तति=पुत्र/पुत्री हो जाने तथा अपने शरीर की त्वचा में झुर्रियां देखते ही पिताजी परिवार का संपूर्ण दायित्व अपने पुत्र को तथा गृहस्थ का दायित्व बहू को माता सौंप देती थी। ऐसे निवृत्त माता-पिता संतोष की सांस लेकर अपनी वृद्धावस्था भगवद् भक्ति में व्यतीत कर शतायु के पश्चात् इस संसार को छोड़ते थे। परिवार में वृद्ध वृद्धाओं का न केवल सम्मान होता था अपितु उन्हें दिव्य और दर्शनीय माना जाता था। वृद्धों के प्रति सम्मान व श्रद्धा रखने व इसके लाभ के बारे में यहाँ तक कहा गया है कि-

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम्।।

परिवार का प्रत्येक सदस्य अपने वृद्धों का सदैव श्रद्धा सहित सम्मान अवश्य करे। इन वृद्धों के आशीर्वाद से चार लाभ प्राप्त होते हैं, यथा- उत्तम आयु, अच्छी विद्या, यश और बल। मनुष्य को इन चारों के अतिरिक्त और क्या चाहिए? सदैव स्मरण रखें- वृद्धों का आशीर्वाद वह सुदृढ़ कवच है जो विपत्ति के समय मनुष्य की रक्षा करता है। आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए सदैव चरणों के अंगूठों को अंगुलियों से स्पर्श करना चाहिए। इन अंगूठों का सीधा संबंध हृदय से होता है। चरण स्पर्श करने वालों को ही हृदय से आशीर्वाद दिया जाता है। सदैव 'आह' की नहीं, 'वाह' की इच्छा करनी चाहिए। कभी भी भूल से किसी की 'आह!' अभिशाप न लें। कवि ने ठीक ही कहा है-

कबिरा हाय गरीब की कबहुं न लीजै धाय।
मरी खाल की हाय से लौह भस्म हो जाए।।

अभिशाप विष से बुझा हुआ वह बाण है, जिसके मात्र स्पर्श से ही शरीर में विष व्याप्त हो जाता है और मनुष्य मृत हो जाता है। वृद्धों की सेवा से जिन चारों लाभों की चर्चा है उनमें आशीर्वाद का ही बड़ा महत्त्व है। तुलसीदास जी ने भी रामचरितमानस के बालकांड में कहा है-

प्रातः काल उठि के रघुनाथा, मात पिता गुरु नांवहि माथा।।

कुछ लोगों की मान्यता है कि जमाना बदल गया है, युग बदल गया है। हमारी सम्मति में तो प्रकृति के पांच महाभूत 'क्षिति जल पावक गगन समीरा' ज्यों के त्यों हैं। हां, मनुष्य की सोच बदल गई, विचार बदल गए हैं, स्वार्थ आ गया है और स्व केंद्रित होने की प्रवृत्ति बढ़ गई है। इसका यह परिणाम है कि विकेंद्रीकरण से केंद्रीयकरण तथा निःस्वार्थ से स्वार्थ की भावनाएं अधिक से अधिक बलवती हो गई हैं। भौतिकवादी जीवन पद्धति पाश्चात्य सभ्यता की देन है। यह भोगवादी संस्कृति हमारे यहाँ नित्य अपने पैर पसारने लगी है। इसके कारण ही परिवार में विघटन की स्थिति उत्पन्न हो गई है।

परिवार के विघटन के कारण ही परिवार के वृद्धों की उपेक्षा होने लगी है। जिन माता-पिता के कृपापूर्ण सहयोग से संतति पढ़ लिखकर, व्यवसाय की स्वामी बनकर अपने पैरों पर खड़ी हुई है, विवाह होते ही उस सन्तति का मन-मस्तिष्क एकदम बदल जाता है। पुत्र को अपनी पत्नी तथा संतानों के सम्मुख जनक-जननी या माता-पिता भार तुल्य लगने लगते हैं। आर्थिक साधनों से रहित माता-पिता को यह पुत्र और भी विष तुल्य मानने लगता है। कभी-कभी इसके लिए कुछ लोग नव विवाहिता पत्नियों को दोष देते हैं। हमारी मान्यता है कि सुसंस्कारवान बेटियाँ, जो कि बहू बनकर और किसी की पत्नी बन कर आई हैं, वे अपने वृद्ध सास-ससुर की कभी भी उपेक्षा नहीं करतीं। हाँ, संस्कारहीन चाहे पुत्र हो अथवा पुत्री; उसके संबंध में जितना अधिक कहा जाए उतना ही कम है। प्रत्येक परिवार में 'अपवाद' स्वरूप छोड़कर सभी अच्छे होते हैं।

इस स्वार्थ प्रधान प्रवृत्ति के कारण ही नगरों महानगरों में वृद्ध आश्रम बढ़ते जा रहे हैं। इन पंक्तियों के लेखक को एक बार यह सुनकर बड़ा दुःख हुआ- जब एक पुत्र ने अपनी पत्नी से अपने पिताजी को कहलवाया- पिताजी, अब आप हमें यहाँ और कब तक समय दे सकते हैं? यदि आप कहें तो हम आपको जाने के लिए ऑटो रिक्शा अभी ला देते हैं। यह सुनते ही मेरा मन तमतमा गया और मैंने उनसे पूछा-

बेटा तुम्हारे परिवार में सनातनी परंपरा के अनुसार मृतक श्राद्ध प्रथा है। तुम्हारे पिताश्री प्रतिवर्ष श्राद्ध तर्पण करते हैं। तुम्हारे पिता दिवंगतों को पानी पिलाने तथा भोजन कराने का व्रत आश्विन मास के कृष्ण पक्ष में करते हैं। वे तो दिवंगतों का यह अंधविश्वास पूर्ण अनुष्ठान करते हैं। तुम्हारे परिवार की एक ओर यह श्राद्ध संस्कृति और दूसरी ओर यह जीवित पिता के निष्कासन का अनुष्ठान! क्या तुम इतने निर्लज्ज हो गए हो कि तुम्हारी जीवित अवस्था में तुम्हारे जनक पिता वृद्धाश्रम में घुट-घुट कर अपनी अंतिम सांस लें! परंतु वह स्वार्थी और निर्लज्ज पुत्र कायरों की भांति चुपचाप खड़ा रहा और दूसरे दिन इस दुष्ट पुत्र ने अपने पिता को वृद्धाश्रम में धकेल दिया।

यह एक मध्यम वर्गीय परिवार का चित्र प्रस्तुत किया गया है। हमारे समाज में माता-पिता का जो सम्मानजनक स्थान स्थापित किया गया है, उसका विवरण लेख के प्रारंभ में ही प्रस्तुत कर दिया गया है। जिन पौराणिक परिवारों में मृतक श्राद्ध की कुप्रथा और अंधविश्वास विद्यमान हैं, उनका उदाहरण भी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है। यह देश का दुर्भाग्य है कि जिस देश में मृतकों को पानी और भोजन भेजने का पक्ष (पखवाड़ा) मनाया जाता हो, उसी देश में जीवित माता पिता को वृद्धाश्रम में धकेला जा रहा है।

यह राष्ट्र अब स्वतंत्र राष्ट्र है। यद्यपि यह परतंत्रता के राजनीतिक बंधनों/बेड़ियों को काट चुका है। इसकी अखंडता और संप्रभुता की रक्षा के लिए इन अंधविश्वासों- मृतक श्राद्ध, तर्पण, दहेज, स्पर्श-अस्पर्श आदि बेड़ियों को काटकर अलग करना होगा, क्योंकि कोई भी राष्ट्र ऐसे अंध विश्वासों से भरे परिवारों, समाजों तथा समुदायों के आधार पर अपनी स्वतंत्रता की रक्षा नहीं कर सकता। राष्ट्र में बढ़ते हुए वृद्धाश्रम स्वतंत्रता पर कलंक हैं। ऐसे कलंक को धो डालना ही समाज तथा राष्ट्र की आवश्यकता है। ❑❑❑

मनुस्मृति में नारी के अधिकारों का प्रश्न-१

वैदिक समाज में नारी का स्थान

❑**महीपाल आर्य पूनिया**, (प्राध्यापक) ग्रा० पो० मतलौडा, जिला हिसार

पाश्चात्य पंडितों ने कुछ तो अज्ञान से और कुछ पक्षपात के कारण भारतीय संस्कृति के इतिहास को बहुत विकृत कर दिया, जिसका अनुसरण हमने भारत में अंग्रेजी राज्य रहने तक किया। अब समय आ गया है कि हम स्वतंत्र चिंतन द्वारा अपनी संस्कृति की छानबीन करें और अपने अतीत गौरव के सही रेखाचित्र उपस्थित करें।

हम जानते हैं कि वेद आदिकालीन हैं, अपौरुषेय हैं। अत एव उन में जो सार्वभौम शिक्षा दी गई है, वह निर्भान्त है और संसार के समस्त मनुष्यों के लिए उपयोगी तथा प्राणी मात्र के लिए कल्याणकारी है। इसी प्रकार स्मृतियों या धर्म-शास्त्रों में मनुस्मृति सर्वाधिक प्रामाणिक आर्ष ग्रंथ है। मनुस्मृति में एक ओर मानव एवं मानव समाज के लिए सांसारिक श्रेष्ठ कर्त्तव्यों का विधान है तो साथ ही मानव को मुक्ति प्राप्त कराने वाले आध्यात्मिक उपदेशों का निरूपण भी है। इस प्रकार मनुस्मृति भौतिक एवं आध्यात्मिक आदेशों/उपदेशों का मिला-जुला अनूठा शास्त्र है। मनु की व्यवस्थाएं सर्वकालिक एवं सार्वभौमिक रूप से सत्य एवं व्यावहारिक हैं। इसका कारण यह है कि मनुस्मृति वेदमूलक है। पूर्णतः वेदमूलक होना मनुस्मृति की एक और परम विशेषता है। इस विशेषता के कारण मनुस्मृति को सर्वाधिक सम्मान मिला।

मनुस्मृति व वेद को लेकर पाठक प्रश्न कर सकते हैं कि हमारे पास मिलावट जांचने की कौन सी तराजू है? इसलिए इस विषय में संक्षेप से कुछ लिख देना असंगत न होगा। मनुस्मृति कोई असंबद्ध स्वतंत्र पुस्तक नहीं। यह वैदिक साहित्य का एक ग्रंथ है। वैदिक धर्म का प्रतिपादन ही इसका कार्य है। वेद ही इसका मूल आधार है। यह बात कल्पित नहीं है। जर्मनी के प्रसिद्ध दार्शनिक आर्थर शोपनहार ने फ्रेंच लेखक अंक वैटिल डुपेरिन का उपनिषद् का लेटिन अनुवाद पढ़ा और कहा कि- 'यह मानव मस्तिष्क की सर्वोच्च उपज है। उनके विचार अति मानुष हैं और यह हमारी शताब्दी की सबसे बड़ी देन है।' उसकी मेज पर लेटिन का यह ग्रंथ औपनिषद् खुला पड़ा रहता था और वह उसकी आराधना किया करता था।

इन विचारों को उल्लिखित करने का हमारा आशय है कि आर्ष ग्रंथ मानव प्रतिभा की सर्वोच्च प्रतिभा और प्रामाणिकता के दर्शन कराते हैं। मनुस्मृति भी एक आर्ष ग्रंथ है। मनुस्मृति एक वैदिक संविधान है, जिसे जानकर यूरोप आश्चर्यचकित रह गया। इतना ही नहीं पाश्चात्य पंडितों ने कुछ तो अज्ञान से और कुछ पक्षपात के कारण भारतीय संस्कृति के इतिहास को बहुत विकृत कर दिया, जिसका अनुसरण हमने भारत में अंग्रेजी राज्य रहने तक किया। अब समय आ गया है कि हम स्वतंत्र चिंतन द्वारा अपनी संस्कृति की छानबीन करें और अपने अतीत गौरव के सही रेखाचित्र उपस्थित करें।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि कई सहस्र वर्षों से वैदिक धर्म में विप्लव उत्पन्न हो गए और सबसे अधिक चोट वैदिक ग्रंथों पर आई। मनुस्मृति भी नहीं बच पाई। उसमें प्रक्षिप्त श्लोक अंकित कर दिए गए, जिन पर अंगुली उठना स्वाभाविक है। हमें मालूम पड़ता है कि मनुस्मृति में मांस-भक्षण संबंधी, मृत पितरों का श्राद्ध तर्पण आदि, तीसरी मिलावट वर्णों को जन्म के अनुसार निश्चित करने के संबंध में, चौथी बात दण्ड विधान की है, जिसे लेकर आज भी अधकचरे लोग आक्षेप कर रहे हैं।

मनुस्मृति पर एक और भी आक्षेप किया जाता है। वैदिक सभ्यता के विरोधियों ने वैदिक सभ्यता के प्रत्येक गुण को अवगुण सिद्ध करने का यत्न किया है और बहुत से कल्पित अवगुण वैदिक सभ्यता के मत्थे मढ़ दिए हैं। ये विरोधी मानस नित्य प्रति वैदिक धर्मियों में असंतोष का बीज बोते रहते हैं। इनमें से एक है- 'स्त्रियों के अधिकारों का प्रश्न'। कहा जाता है कि मनु ने स्त्री के पद को मनुष्य समाज में बहुत नीचा माना है। बहुत पढ़ी-लिखीं आर्य (हिंदू) रमणियाँ हिंदू धर्म ग्रंथों के प्रति इसलिए भी घृणा प्रकट करने लगी हैं। यह आक्षेप इतनी कोटियों में विभक्त सुनाई पड़ता है कि-

(१) हिंदू घरों में स्त्रियों को नीच समझा जाता है।
(२) उनको वेद पढ़ने का अधिकार नहीं है।
(३) उनको सदा पुरुषों के अधीन रहना होता है।

(४) उनको पैतृक संपत्ति में कुछ भाग नहीं मिलता।
(५) सदाचार के नियम स्त्रियों के लिए पुरुषों की अपेक्षा अधिक कड़े हैं।

इन सब विषयों को लेकर हम विचार-विनिमय कर जिज्ञासुओं की जिज्ञासा का हल तलाशते हैं। सर्वप्रथम तो इसमें संदेह नहीं कि भिन्न-भिन्न युगों में, भिन्न-भिन्न देशों में, स्त्रियों की स्थिति के भिन्न-भिन्न नियम रहे हैं। आज से बहुत दिनों पूर्व (मध्यकाल में) भारतवर्ष की स्त्रियों की दशा अवश्य ही दयनीय थी। पुरुषों के अत्याचार बहुत कुछ बढ़ गए थे, परंतु आक्षेप करने वाले दो बातों को भूल जाते हैं। पहली बात यह कि स्त्रियों की इस पतनावस्था के लिए वेद या मनुस्मृति उत्तरदाता नहीं हैं। दूसरी बात यह है कि उस समय न केवल भारतवर्ष ही, किंतु अन्य देशों और जातियों में भी स्त्रियों की दशा वैसी ही थी।

स्त्रियों में वैदिक धर्म के प्रति घृणा उत्पन्न करने का विशेष काम ईसाईयों की ओर से होता है। इसमें इनका अपना स्वार्थ है। यह स्वार्थ उनको प्रेरित करता है कि वैदिक ग्रंथों को उनको निज रूप से अन्यथा दिखाया जाए। ईसाई अपने इस प्रयास में शीघ्र ही क्यों सफल हो जाते हैं, इसके दो मुख्य हेतु हैं। आजकल अंग्रेजी भाषा का प्रचार है। उसी की पूछ भी है। अंग्रेजी साहित्य अधिकतर ईसाईयों का साहित्य है, जो मिल्टन के स्वर्ग बिछोह (पैराडाइज लोस्ट) को पढ़ता है, वह साथ-साथ ईसाई मत की बातों को भी धीरे-धीरे पीता जाता है। अंग्रेजी साहित्य के धुरंधर विद्वान् प्रायः ईसाई ही हैं, अतः उनके आदर्श का भी कुछ न कुछ प्रभाव पड़ता ही है। दूसरा कारण यह है कि हमारे युवक और युवतियों की शिक्षा अपने धर्म ग्रंथों में कम होती है। स्त्रियां समझती हैं कि स्त्रियों की स्वतंत्रता में ईसाई मत का विशेष हाथ है, इसलिए चाहे खुल्लम-खुल्ला ईसाई मत स्वीकार न भी करें, तो भी अपने धर्म के प्रति घृणा न सही, उपेक्षा उत्पन्न हो जाती है और शनैः शनैः उसका फल बुरा निकलता है।

हमारी धारणा है कि स्त्रियों की वेद या वैदिक शास्त्रों में वही स्थिति है जो उसकी मनुष्य समाज में होनी चाहिए। अर्थात् जो उनके और मनुष्य समाज के लिए उपयोगी है। उस स्थिति से पतन पीछे से हुआ है और इसके दो कारण हैं। पहला और मुख्य कारण तो यह है कि स्त्रियां स्वभावतः पुरुषों की अपेक्षा शारीरिक बल में कम होती हैं, इसलिए जब मनुष्य समाज सभ्यता में कम हो जाता है तो उसमें शारीरिक बल को ही सबसे उत्कृष्ट और उसी को न्याय समझ लिया जाता है। स्त्रियां शारीरिक बल के आधार पर न पहले कोई अधिकार ले सकी थी, न अब कभी ले सकेंगी। यह तो उनकी प्राकृतिक कमी है। स्त्रियों के मान का आधार उनके अन्य गुण हैं। इनको केवल सभ्य समाज ही समझ सकता है। सभ्य व्यक्ति नारी के चरित्र चित्रण को जानता है। उसकी दृष्टि में-

हया व हुरमते महरो वफा की शान है औरत।
जो देखो गौर से हर मर्द का ईमान है औरत।।
अगर औरत ना होती तो ये जहां मातम कहां होता।
अगर औरत ना होती ये मकां वीरान घर होता।।
जब यह हंसती है तो कुदरत बेखुदी में मुस्कराती है।
जब वह रोती है तो सारी कायनात आंसू बहाती है।।
जब यह सोती है तो सातों आसमां को नींद आती है।
जब यह जागती है तो ख्वाबीदा आलम को जगाती है।।

सभ्य व्यक्ति, सभ्य समाज सम्यकतया यह जानता है कि नारी शब्द नृ धातु से बना है। स्त्री शब्द स्त्यै धातु से बना है। यास्काचार्य के मत में स्त्यै का अर्थ सिकुड़ना है, वह लजाती है। योषा शब्द यु धातु से बना है, जिसका अर्थ है-जुटाना। वह स्वयं को पुरुष के साथ जुटाती है। प्रमदा शब्द भी नारी के लिए प्रयुक्त है, जिसका अर्थ है हर्ष प्रमदः समदौ हर्षे च। अर्थात् हर्षित स्वभाव वाली होने के कारण नारी को प्रमदा कहते हैं।

अबला शब्द की रचना नारी के शारीरिक बल को देखकर ही की गई है। क्योंकि पुरुष की अपेक्षा कम ही बल होता है उसमें। हां, यह सत्य है कि मानसिक व आत्मिक बल में स्त्री कई बार पुरुषों से भी आगे होती है। तभी तो उसे सबला कहना उचित है। मैना शब्द जो ऋग्वेद में भी आया है जो नारी का वाचक है। यास्क मुनि के अनुसार 'मानयन्ति एनाः' (निरुक्त ३/२१/२) पुरुष इसका मान करते हैं इसलिये इसको मैना भी कहते हैं। पार्वती की माँ का नाम मैना था। मानिनी शब्द का व्यवहार भी नारी के मनोवैज्ञानिक रूप को व्यक्त करता है। स्त्री मानप्रिय होती है। मानिनी का दूसरा स्वरूप है- आत्मसम्मान की भावना। मह शब्द से बना महिला शब्द इलच् प्रत्यय करने पर बनता है। नारी पूज्या है, अतः उसे महिला कहते हैं। मातृ (माता) नारी मातृशक्ति है। माङ् माने धातु से 'नप्तृनेष्ट्री' इत्यादि उणादि सूत्र से तृ प्रत्यय लगाने पर मातृ शब्द निष्पन्न होता है। मान्यते पूज्यते जनैः इति माता। अर्थात् मनुष्यों द्वारा यह पूज्या है, मानने योग्य है, अतः माता कहलाती है।

नारी के लिए संस्कृत में न जाने कितने सम्मानसूचक शब्द प्रयुक्त हैं, लेख विस्तार भय से यहाँ नहीं दिये जा सकते। स्पष्ट है कि संबन्ध भेद वा गुण भेद से नारी को अनेक नामों से जाना जाता है।

(आगामी अंकों में जारी)

स्वतंत्रता संग्राम के योद्धा : ठाकुर बिशन सिंह मेड़तिया

लेखक : ठाकुर सौभाग्यसिंह शेखावत, भगतपुरा
प्रस्तुति : पण्डित राजेश दीक्षित, किलोई सूरा, झज्जर

ठाकुर बिशनसिंह स्वतंत्रता का अनन्य प्रेमी, महान देशभक्त, असाधारण साहसी और प्रचण्ड वीर पुरुष था। वीरता और कुलाभिमान के साथ साथ उसमें संगठन करने की भी अपूर्व बुद्धि थी।

देश को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त करवाने में जिन राष्ट्रभक्त वीरों ने सक्रिय भाग लिया था, उनमें राजस्थान के मारवाड़ राज्य के परबतसर परगने के गूलर ठिकाने के स्वामी बिशनसिंह मेड़तिया का भी अविस्मरणीय स्थान है। ठाकुर बिशन सिंह बादशाह अकबर के विरुद्ध चितौड़ के प्रसिद्ध युद्ध में जूझते हुए प्राणोत्सर्ग करने वाले राव जयमल्ल मेड़तिया के लघु पुत्र सुरतान का वंशधर था। सुरतान के नाम से प्रचलित सुरतानोत शाखा के मारवाड़ में जावला, गूलर और भखरी तीन बड़े ठिकाने थे। ठाकुर बिशन सिंह ठाकुर सुरतान के दसवें वंशधर ठाकुर बख्तावरसिंह के उत्तराधिकारी थे।

ठाकुर बिशनसिंह स्वतंत्रता का अनन्य प्रेमी, महान देशभक्त, असाधारण साहसी और प्रचण्ड वीर पुरुष था। वीरता और कुलाभिमान के साथ साथ उसमें संगठन करने की भी अपूर्व बुद्धि थी। अपने सरक्तिय पड़ौसी सम प्रतिष्ठा प्राप्त सामन्त सरदारों में उसके नेतृत्व के प्रति अगाध निष्ठा थी।

वह ब्रिटिश सत्ता का प्रबलतम विरोधी होने के साथ-साथ अपने ही वंश के शक्ति सम्पन्न नवकोटि मरुधरा के स्वामी और रणबंका राठौड़ों के सिरताज महाराजा तख्तसिंह का भी उग्र विरोधी था। महाराजा तख्तसिंह गुजरात के अहमदनगर (ईडर राज्य) से गोद आकर मारवाड़ के राज्य सिंहासन पर बैठे थे। तख्तसिंह को राज्य दिलाने में अंग्रेज सरकार का पूरा हाथ रहा था। महाराजा तख्तसिंह के मन में इसलिये कम्पनी सरकार के प्रति श्रद्धा और राज भक्ति की भावना व्याप्त थी। ठाकुर बिशनसिंह, महाराजा तख्तसिंह की अंग्रेज परस्त दुर्बल नीति का कट्टर विरोधी था और समय-समय पर वह अपना विरोध सरे आम व्यक्त करता रहता था।

ऐसी अनेक घटनाएं मारवाड़ के ग्राम समाज में आज भी प्रचलित है, जो ठाकुर बिशनसिंह के साहस, शौर्य और निर्भीकता का स्मरण दिलाती हैं। उसे यह सह्य नहीं था कि रणबंका राठौड़ों का महाराजा कम्पनी सरकार का राजनीतिक प्रभुत्व स्वीकार करे।

सं० १९०८ का जोधपुर दुर्ग में महाराजा तख्तसिंह और ठाकुर बिशन सिंह के मध्य वार्तालाप का एक प्रसंग ठाकुर के साहस और निर्भीकता का उद्घाटन करता है। महाराजा तख्तसिंह ने अंग्रेजों के विरोध की नीति त्यागने के लिए ठाकुर को पर्याप्तरूपेण समझाया, किन्तु वह सदैव उनके विरुद्ध ही चलता रहा। तब तख्तसिंह ने भरे दरबार में ठाकुर बिशनसिंह पर रुष्ट होकर कहा- 'ठाकरां जाणो छो कै नी हूं गुजराती छूं।' महाराजा का कथन का अभिप्राय था कि मेरा जन्म गुजरात में हुआ है। गुजरात वाले बड़े क्रोधी और कठोर होते है। कहीं नाराजगी से आपका नुकसान न हो जाये। ठाकुर बिशनसिंह ने तत्काल निर्भीकता पूर्वक उत्तर दिया- 'खमा! महाराजा, हूँ जाणु छूं धणी गुजराती छै। पण हूँ गूलर रौ ठाकुर छूं।' गूलर के रस में सिक्त फूहे से गुजराती (निमोनिया) चला जाता है। ठाकुर के इस कटु किन्तु व्यंग्य भरे सत्य उत्तर से महाराजा तख्तसिंह की भृकुटि तनी की तनी रह गई।

महाराजा तख्तसिंह ने ठाकुर बिशनसिंह का दमन करने के लिए सं० १९१० में अपने अमात्य सिंघवी कुशलराज को राजकीय सेना देकर गूलर भेज दिया। गूलर दुर्ग को चारों ओर से घेर कर तोपों की अग्नि वर्षा बरसाने लगे। ठाकुर बिशनसिंह ने अपने स्वामी की सेना का वीरोचित स्वागत किया। दोनों ओर से तोपों, तीरों और बंदूकों

के गोलों, बाणों और गोलियों की झड़ी लग गई।

आकाश गूंज उठा। बाणों, तीरों और गोलियों का सम्मलेन हुआ। ठाकुर गूलर ने दुर्ग त्याग कर छापामार युद्ध आरम्भ किया और शक्ति संचय कर पुनः गूलर पर अपना आधिपत्य स्थापित किया। इससे जोधपुर नरेश की बड़ी अपकीर्ति हुई।

महाराजा तख्तसिंह ने पुनः अपनी सेना गूलर भेजी। ठाकुर बिशनसिंह ने अपने सहयोगियों की मंत्रणा पर गूलर को छोड़ कर मारवाड़ और ब्रिटिश शासित इलाकों में धावे मारने प्रारम्भ किये। रोल (नागौर के पास) नामक कस्बे पर आक्रमण कर राजकीय सैनिकों को वहां से निकाल दिया और स्वाधीनता के प्रयासों को गतिमान बनाये रखने के लिए लूट लिया।

मारवाड़ का आउवा ठिकाना स्वातंत्र्य वीरों का तब केंद्र बन चुका था। सं० १९१४ वि० के संग्राम का नेतृत्व मारवाड़ के ठाकुर कुशालसिंह आउवा, ठाकुर बिशनसिंह गूलर और ठाकुर शिवनाथसिंह आसोप कर रहे थे। अजमेर में स्थित ब्रिटिश अधिकारी सर हेनरी लारेंस इन परिस्थितियों से बड़ा बेचैन था।

स्वातंत्र्य वीरों की सेना ऐरनपुरा और डीसा की ओर से मारवाड़ की ओर बढ़ रही थी। जोधपुर नरेश अंग्रेजों की सहायता कर रहे थे। पोलिटिकिल एजेन्ट सर हेनरी लारेंस के आदेश पर जोधपुर की सेना आउवा की ओर कूच कर रही थी। एक हजार पदाति, ५०० अश्वारोही और चार तोपें मुस्ताक अली के नायकत्व में आउवा पर चली आ रही थी। उधर राजस्थानी वीर बिशनसिंह, ठाकुर अजीतसिंह (आलनियावास) सूबेदार मोतीखां, दफेदार अब्दुल अली के नेतृत्व में एक हजार योद्धा और छः सौ सवारों ने बिठोड़ा स्थान पर सामना किया।

दो दिन के घमासान युद्ध में जोधपुर की सेना के प्रमुख ठाकुर ओनाड़सिंह पंवार और राजमल लोढ़ा मारे गये। सिंघवी कुशलराज और मेहता विजयमल, पराजयमल बनकर भाग गये। स्वातंत्र्य सेनानियों की विजय के गीत राजस्थान में गाये जाने लगे। सिंघवी कुशलराज की अपकीर्ति व भर्त्सना हुई। कहावत प्रचलित हो गई–

'नीलो घोड़ो फेरतो भाज गयो कुसलेस।'

राजकीय सेना की पराजय का समाचार सुनकर अजमेर में खलबली मच गई। कैप्टिन मेसन एक बड़ी सेना लेकर आउवा पर आया, किन्तु स्वातंत्र्य वीरों के सामने वह टिक नहीं सका और लड़ता हुआ मारा गया। स्वातंत्र्य संग्राम को स्वर देने वाले कवि ने मेसन की मृत्यु का उल्लेख करते हुए कहा है–

अंग्रेजों को थक कर इन सरदारों के कथित अपराध क्षमा करने का नाटक रचने को बाध्य होना पड़ा। तब कहीं जाकर संवत् १९२५ विक्रमी में राजपूताने के ए०जी०जी० कर्नल कीटिंग को शान्ति की सांस लेने का अवसर मिला।

अजंट अजको आवियो, ताता खड़ तोखार।
काळा भिड़िया कड़क नै, धीब लियो खगधार।।
फीटा पड़ भाग्या फिरंग, मेसन अजंट माराय।
घाल्या डोली घायालां, कटक घणौ कटवाय।।

द्वितीय दिन पुनः घमासान हुआ, जिसमें दो हजार अंग्रेजी सेना के सिपाही मारे गये। यह समाचार सुनकर नसीराबाद, नीमच और महू तीनों सैनिक स्थानों की छावनियों की सेना आउवा को घेरने के लिए आई। जोधपुर से भी नई मदद भेजी गई। एक बार फिर आउवा के रणक्षेत्र में खून का फाग खेला गया।

ठाकुर कुशालसिंह चाम्पावत, ठाकुर बिशनसिंह मेड़तिया, ठाकुर भोपालसिंह चांपावत, ठाकुर हणवन्तसिंह शेखावत, ठाकुर किशनसिंह खींची, देवीसिंह मेड़तिया, हिन्दुसिंह जोधा और नृसिंह तंवर ने जबरदस्त सामना किया। ब्रिटिश सेना को विचलित कर दिया पर जैसा कि प्रसिद्ध है, 'घण जीतै, सूरमां हारै', सो अंत में स्वाधीनता सेनानियों को आउवा दुर्ग को असुरक्षित समझ कर पहाड़ों में जाना पड़ा। पुनः आड़ावळा के पहाड़ वीरों के आश्रय स्थल बने।

स्वातंत्र्य समर के असफल हो जाने पर गूलर ठाकुर बिशनसिंह, आउवा ठाकुर कुशालसिंह व आसोप ठाकुर शिवनाथ सिंह आदि अपने साथियों सहित बीकानेर की ओर चले गए। आलनियावास ठाकुर अजीतसिंह शेखावाटी की ओर चले गये। वहां से अपने बहनोई आनंदसिंह शेखावत (मंडावा ठाकुर) की मदद लेकर पुनः गोरों से आलनियावास छुड़ाया।

अन्य सरदार वहां से ब्रिटिश प्रान्तों और मारवाड़ में छापे मारते रहे। अन्त में अंग्रेजों को थक कर इन सरदारों के कथित अपराध क्षमा करने का नाटक रचने को बाध्य होना पड़ा। तब कहीं जाकर संवत् १९२५ विक्रमी में राजपूताने के ए०जी०जी० कर्नल कीटिंग को शान्ति की सांस लेने का अवसर मिला। इस प्रकार राजस्थान में स्वाधीनता संग्राम के सूत्रधार ठाकुर बिशनसिंह मेड़तिया ने अपने ठिकाने गूलर में प्रवेश कर विश्राम लिया।

आर्यसमाज द्वारा मानव सेवा कार्य

❒राहुल सांस्कृत्यायन/केदारनाथ पाण्डेय (आत्मकथा-मेरी जीवन यात्रा)

आर्यसमाज ने जात-पात, मत-मतान्तर, अमीर-गरीब आदि सभी भेदों को दरकिनार कर समाज की सेवा की है, जो अनुकरणीय एवं अविस्मरणीय है। हाँ, उसकी 'मार्किटिंग' नहीं की है। -डॉ० विवेक आर्य

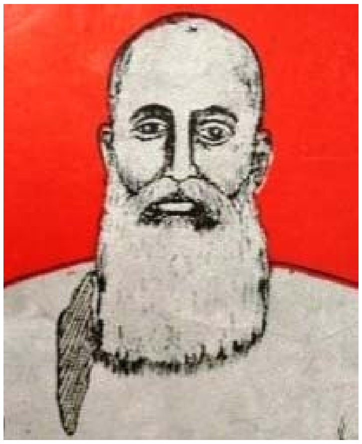

जाड़े के कुछ बीतने पर मालूम हुआ, पोखरयाँ (कानपुर जिले) में प्लेग जोर पकड़े हुए हैं। लोग बहुत मर रहे हैं। आरम्भिक युग में आर्यसमाजियों में निर्भय हो बीमारों, अनाथों, गरीबों की सेवा करने वाले वीरों की कितनी ही कहानियाँ मुझे सुनने को मिली थीं। पण्डित रलाराम बेज वाडिया रेलवे के साधारण पैटमन अपनी ऐसी ही सेवाओं से आर्यसमाज के एक श्रद्धेय पुरुष बन गये थे। अपनी सात-आठ रुपये की तनख्वाह में से भी बचाकर वह कुछ पुस्तकें बाँटते, कुछ दवाईयाँ ले प्लेग के दिनों में- और उस समय सारे उत्तर भारत में प्लेग का भारी प्रकोप था-रोगियों की सेवा करते। एक जैन परिवार के बारे में कहा जाता है, वह आर्यसमाजियों से बहुत चिढ़ता था। एक बार उसके घर के सभी लोग बीमार पड़ गये, कुछ मर गये, बाकि को पानी देने वाला तक कोई न था।

पंडित रलाराम वहाँ पहुँचे। एक-दो दिन वे लोग पतित समझकर उनके हाथ की दवा नहीं पीते। घर के तरुण लड़के की गिल्टी पक गई थी। उस वक्त डॉक्टर कहाँ मिलते! पंडित रलाराम ने चीरने के लिए अपना चाकू निकाला, किन्तु उसमें मोर्चा लगा था। उन्होंने गिल्टी को मुँह लगाकर गिल्टी को चूस कर फैंक दिया। घरवालों पर असाधारण प्रभाव पड़ा और तबसे वह पंडित रलाराम को देवता सा मानने लगे। राजपूतों की अकाल में सेवा करते, बाँटने के लिए झोले में डाले चने के बोझ से कैसे एक बार महात्मा हँसराज गिर गये थे, यह कथा भी मैंने सुनी थी। मेरे रहने से कुछ वर्ष पहले आगरा में मरे तीन दिन के सड़े मुर्दे को निकालकर फूंकने का साहस कर कैसे एक आर्यसमाजी ने मृत्यु को आमंत्रण दिया था, यह मेरे लिये एक ताजी घटना थी। इस प्रकार आर्यसमाज ने सिर्फ जबानी जमाखर्च ही नहीं, प्राणों की आहुति और पीड़ितों की सेवा कर अपने लिये एक आकर्षक इतिहास तैयार किया था। मैं कितने दिनों से लालसा रखता था ऐसी सेवा के लिए।

मैं और योगेश पोखरायाँ गये। हमने अपने दोस्तों से चंद रुपये माँग लिए थे। पोखरायाँ के डिस्पेन्सरी के डॉक्टर बड़े सज्जन थे। वह स्वयं तो मरीजों के घर नहीं जा सकते थे, किन्तु उन्होंने हमसे कह दिया कि जितनी दवा की जरुरत हो हमसे ले जावें। दूध-साबूदाने का इंतजाम हमने अपने रुपये से कर लिया। बाजार के बहुत लोग घर छोड़ गये थे, और बहुत से किस्मत पर सब कुछ छोड़ घर में ही पड़े हुए थे। हम लोग एक खाली गोले में ठहरे। मरीजों का टेम्परेचर लेना, दवा देना, और बैठकर कुछ सेवा सुश्रूषा करना हमारा काम था। किसी किसी की गम्भीर बीमारी के बारे में डॉक्टर से सलाह लेते। हम लोग नंगे पैर थे, प्लेग का कोई टीका विका नहीं लिया था, मौत हमारे लिए डर की बात न थी, इसलिए हम लोग निधड़क रात-दिन घूमते थे। एक दिन पता लगा, कि सराय में एक भटियारा बीमार पड़ा है। देखा, घर के कच्चे ओसारे में नीचे धँसी घाट पर एक 24-25 साल का साँवला नौजवान पड़ा है। घर में क्या सराय में भी कोई नहीं था। शायद दो दिन से उसे पानी भी देने कोई नहीं आया। जब धनिकों को भी उस बीमारी में पानी देने वाले दुर्लभ थे, तो हाथ पैर चलाकर शाम की रोजी चलाने वाले भटिहारे कि कौन सुध लेता? शायद हमने अंत तक उसे बेहोश ही देखा। हमने उसके पास रहने की अपनी ड्यूटी बाँध ली। रात को लालटेन लिये उसके पास पड़े रहते। डॉक्टर साहिब के थर्मामीटर को लालटेन के पास से देखते हुए मैंने उसे गर्म शीशे से सटा दिया था, और पारा थर्मामीटर तोड़ कर उड़ गया। डॉक्टर साहिब ने उसके लिए कुछ नहीं कहा। दो या तीन दिन की सेवा के बाद भी भटियारा बचा नहीं। हमें इस बात का संतोष रहा कि हमने हिन्दू-मुस्लमान का जरा भी भेदभाव किये बिना उसकी सेवा की। ❒❒

यह मंच कालेज गोईंग स्टुडैंट्स के लिये है। यदि आप विद्यार्थी हैं और देश तथा समाज के बारे में सोचते हैं तो अपने संक्षिप्त और सारगर्भित विचार भेजिये; अपने संक्षिप्त परिचय और चित्र के साथ।

प्रतिभा आर्या युवा मंच सम्पादक
shantidharmijind@gmail.com

अतीत को निहार लें भविष्य को संवार लें।

किसी भी देश की संस्कृति आम जनमानस के द्वारा अपनाए जाने वाले संस्कारो, विचारों, व्यवहार, मानसिकता, आदत, शासन कला, क्रियाकलापों का आईना है, जिसका मुख्य उद्देश्य यह लोक तथा परलोक सुधारना होता है। भारत की लाजवाब संस्कृति के कारण ही इसे विश्व गुरु कहलाने का गौरव प्राप्त है। जिस तरह राक्षस प्रवृत्ति के लोगों के लिए साम्राज्य बढ़ाने के लिए सबसे बड़ी बाधा देव प्रवृत्ति के लोग होते हैं, उसी तरह विश्व के अनेक लोगों के लिए भारत की बेहतरीन संस्कृति एक बहुत बड़ी रुकावट रही है, जिसे नष्ट करने के लिए उन्होंने समय-समय पर इस देश पर आक्रमण किए तथा लूटमार की। सिकंदर, अहमद शाह अब्दाली, तैमूर लंग, बाबर, अंग्रेजों के आक्रमण तथा कब्जे का कारण भारत की बेहतरीन संस्कृति का अखरना ही तो था। कुछ विदेशी लोग यहाँ आए और हमारी संस्कृति से प्रभावित होकर यहीं के होकर रह गए, लेकिन हमें याद रखना चाहिए कि जितना नुकसान विदेशियों ने हमारी संस्कृति को नहीं पहुंचाया, जितना कि हम स्वयं इसे पहुंचा रहे हैं। भारत की संस्कृति वैदिक संस्कृति है। वेद परमात्मा की वाणी है। वेद हमें न सिर्फ यह जीवन बल्कि परलोक भी सुधारने का रास्ता बताते हैं। हमें सबका भला करने, सारे विश्व को अपना परिवार समझने तथा धर्म के मार्ग पर चलने के लिए शिक्षा देते हैं। वेद सब प्राणियों से मित्र के समान व्यवहार करने की शिक्षा देते हैं। यह हमारी मूर्खता नहीं तो और क्या है कि हम अपनी संस्कृति को छोड़कर दूसरे देशों की अपसंस्कृति को अपनाते जा रहे हैं। माता पिता की अवहेलना करना, मादक पदार्थों तथा मांस आदि का सेवन करना, दूसरों की निंदा करना, स्वार्थी होना, अपने परिवार से बातें छुपाना, देशहित में न सोचना, धर्म-कर्म की तरफ ध्यान न देना, परस्त्री को बुरी नजर से देखना आदि हमारी संस्कृति का हिस्सा नहीं हैं। न ही इनमें से कोई बात वेदों के अनुरूप है। तभी तो भारत की छवि संसार में धीरे-धीरे धूमिल होती जा रही है। हमारे पूर्वज दान, त्याग तथा सीमित भोग करने वाले होने के कारण महान थे लेकिन हम भौतिकतावाद की अंधी दौड़ में शामिल होकर अपने आप को भूल गए हैं। आओ, एक बार फिर हम अपने सुनहरे अतीत को देखें और बेहतर कल का निर्माण करें।

-**प्रो० शामलाल कौशल**, रोहतक

व्यंजन : महादेवी वर्मा का व्यंग्य बाण

एक बार महादेवी जी से कुछ आधुनिकाएँ मिलने के लिए आईं। उन्होंने बातचीत के दौरान उनसे सहज ही पूछा- 'नारी आपके जमाने में अधिक मुक्त थी या आज के हमारे युग में?' महादेवी जी ने उत्तर दिया, 'हमारे जमाने में वह अधिक स्वतंत्र थी, जबकि आप लोग व्यंजन हैं। व्यंजन में भी कहीं स्वतंत्रता होती है?'

महादेवी जी ने उन्हें मौन देखा तो कहा- 'उस जमाने में जब हम लोग सत्याग्रह के लिए तिरंगा हाथ में लेकर निकला करते थे, सभी लोग हमें आदर से देखते थे, देखते ही हाथ जोड़कर खड़े हो जाते थे। यदि हम शराब की दुकान पर धरना देने चलीं जाती थीं तो अच्छे अच्छों का नशा देखते ही काफूर हो जाता था। आज तो नारी फैशन के जिस लिवास में निकलती है, उसे देखकर तो जो नहीं पिये हैं, उन्हें भी नशा हो जाएगा और जो पिये हैं, उनका तो कहना ही क्या?'

महादेवी जी का व्यंग्य बाण एक तरह से उन्हें घायल कर गया।

(शिवकुमार गोयल) **प्रस्तुति : उपासना सोनी**, राजकीय कालेज हिसार

योगेश्वर श्रीकृष्ण : कुछ यक्ष प्रश्न

❒**प्रतिभा आर्या** (गार्गी कॉलेज दिल्ली वि०वि०)
स्टुडेंट एडिटर, शांतिधर्मी, हिंदी मासिक

एक टीवी रियलिटी शो में मंच संचालिका कह रही थी- जन्माष्टमी-- (Symbol of love) प्रेम का प्रतीक है। मुझे नहीं पता संचालक साहिबा ने अपने इस स्क्रिप्ट को कितनी गहराई से अवलोकन करके लिखा, परंतु उनके इस कथन ने मुझे प्रेम के कांसेप्ट को समझने पर जरूर मजबूर कर दिया। आखिर प्रेम किस से? माता-पिता! भाई-बहन! पति-पत्नी! नहीं, इनमें से तो कोई नहीं था। पति-पत्नी भी नहीं! क्योंकि इनकी जोड़ी को राम-सीता की जोड़ी से जोड़कर देखा जाता है और पति पत्नी तो समाज की दृष्टि से, कानून की दृष्टि से पूरे सम्मान के साथ जीवन साथी होते हैं, पर मैंने जो सुना है, उसके अनुसार तो राधा-कृष्ण कभी एक दूसरे के हो ही न पाए थे--। केवल प्रेम प्रसंग ही था, जो उनके रिश्ते को बतलाता है? तो क्या मैं यह मानकर चलूँ-- जन्माष्टमी (Symbol of love) प्रेम का प्रतीक-- त्यौहार, उनके लिए? जो केवल प्रेम-प्रसंग में हैं और शादी फिलहाल हुई नहीं है।

अधिकतर लोग जन्माष्टमी के त्यौहार को बहुत धूमधाम से मनाते हैं- राधा-कृष्ण की मूर्ति लगाकर, सजाकर, जागरण आयोजित करवा कर, उनके प्रेम प्रसंग का बखान करके गौरवान्वित महसूस करके--पर विडंबना/विरोधाभास तब हुआ जब एक तरफ तो रात-रात भर ढ़ोल-मंजीरे पीटकर राधा-कृष्ण की रासलीला का बखान करते हैं, खुद को इनका भक्त बताते हैं और वहीं दूसरी तरफ जब घर की बेटी/बेटे के प्रेम प्रसंग का पता चल जाए या उनके बालिग होने पर भी घर से भाग कर शादी करने का पता चले-- तो ओनर किलिंग तक पहुंच जाते हैं! अब गलत क्या है? तुम? या तुम्हारा भगवान? और कृष्ण भगवान के भक्त बनने से पहले (जो कि आमतौर पर मनुष्य की प्रवृत्ति है) उनके बैकग्राउंड की जांच पड़ताल तो की ही होगी ना, कि कहीं उनका नाम बदनाम तो नहीं!

अब अगर इतने ही सामाजिक नियमों को मानने वाले हो तो या तो कृष्ण के राधा से संबंध को भी गलत ठहराओ या फिर ओनर किलिंग तक मत पहुंचो! क्योंकि जिसे पूजते हो, कम से कम वह तो आदर्श स्थापित करने वाला होना चाहिए। पर यहाँ तो सब उलटा हो रहा है।

अरे!! कहीं ऐसा तो नहीं कि वास्तविक कृष्ण को जानते ही न हों! क्या पता, राधा कृष्ण की कहानी पूरा ढकोसला हो! कहीं Economy vs reality/religion तो न हो--! अपनी कमाई के चक्कर में धार्मिक वास्तविकता को ही बदल लो। क्योंकि आज के समय में Story making बड़ा अच्छा साधन है, घर बैठे पैसे कमाने का! एक ऐसी कंपनी खोलने का, जिसमें Educated workers and Infrastucture (प्रशिक्षित कारीगर और मूलभूत ढांचा) की जरूरत भी नहीं है। जरूरत है तो अंधविश्वासी और भेड़ चाली Customers की। पर कंपनी मैनेजर विरोधाभासी मिलेगा, क्योंकि दुकान चलाने के लिए राधा-कृष्ण को सही बताना होगा, पर घर के लड़की/लड़का ऐसा करेंगे तो इज्जत बिखर जाएगी! अरे! मामला थोड़ा Complicated है!

विडंबना है मेरे समाज की, जो भेड़चाल के चलते, अंधविश्वास के चलते इतने बड़े जाल में फंसते चले जा रहे हैं। अरे! कभी तो गहराई में जाकर देखें! कभी तो असलियत पर गौर कीजिए--तब पता चलेगा योगीराज श्रीकृष्ण के महान जीवन के बारे में-- और वहाँ कोई Controversies भी नहीं मिलेगी कथनी और करनी में-- क्योंकि जो सच होता है वह बस सच ही होता है, इससे अधिक और कुछ नहीं।

असल कृष्ण तो नीतिमान्- सच्चाई, न्याय के साथ खड़ा रहने वाला था। श्रीकृष्ण उस महान् व्यक्तित्व का नाम है जिसने रुक्मणी से शादी करने के १२ साल बाद तक भी ब्रह्मचर्य का पालन किया था।

शर्म आती है जब श्रीकृष्ण का नाम राधा के साथ इतने अश्लील तरीके से जोड़ते हैं, जबकि राधा का नाम इतिहास में इस प्रकरण में तो कतई नहीं मिलता है। सिंहासन युधिष्ठिर को देने वाला इतना त्यागावन व्यक्तित्व क्यों किसी की मटकी को फोड़ेगा!

जन्माष्टमी को राधा-कृष्ण 'सिंबल ऑफ लव' के रूप में नहीं, योगीराज श्रीकृष्ण के जन्म-दिवस के रुप में मनाएंगे तो और भी तथ्य निकल कर बाहर आएंगे। सच में वे हमारे लिये आदर्श थे, आदर्श हैं और रहेंगे। श्रीकृष्ण कोई मिथक नहीं, ऐतिहासिक और व्यावहारिक सत्य है। ❒

कर्म से ही प्रारब्ध बनता है

❑श्री महात्मा चैतन्यमुनि जी

भाग्य का निर्माण हमारे अपने ही कर्मों के अनुसार होता है। अपने कर्मों के अनुसार ही जीव की मरने के पश्चात् तीन प्रकार की गति हुआ करती है।

वास्तव में सुख-दुःख हमारे अपने ही कर्मों का फल होता है, यदि व्यक्ति ऐसा पक्का निश्चय कर ले तो वह पाप कर्म करने से बच सकता है। वह परमात्मा पूर्णरूप से न्यायकारी है अतः उसे किसी प्रकार का धोखा भी नहीं दिया जा सकता है। कर्मों के फल व्यक्ति को भोगने ही पड़ते हैं, चाहे वह अपनी ओर से बचने का कितना ही प्रयास करे। महाभारत में भीष्म जी युधिष्ठर को कर्म फल के सम्बन्ध में उपदेश देते हुए एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात बताते हैं:-

यथाधेनुसहस्रेषु वत्सो विन्दति मातरम्।
एवं पूर्वकृतं कर्म कर्तारमनुगच्छति।।
अचोद्यमानानि यथा पुष्पाणि च फलानि च।
स्वकालं नाति वर्वन्ते तथा कर्म पुराकृतम्।।(०७-२२,२३)

अर्थात् जैसे बछड़ा हजारों गौवों के बीच में अपनी माता को ढूंढ लेता है उसी प्रकार पहले का किया हुआ कर्म भी कर्त्ता को पहचानकर उसका अनुकरण करता है। जैसे फूल और फल किसी की प्रेरणा न होने पर भी अपने समय का उल्लंघन नहीं करते ठीक समय पर फलने-फूलने लग जाते हैं, वैसे ही पहले का किया हुआ कर्म भी समय पर फल देता ही है।

सत्यधर्म विचार में महर्षि जी लिखते हैं- 'जो कोई बुरा काम करता है, वह दुःख पाने से कदाचित् नहीं बच सकता और जो कोई अच्छा काम करता है, वह दुःख पाने से बच जाता है, किसी भी देश में चाहे क्यों न हो।'

यह आवश्यक नहीं कि इस जन्म के लिए कर्मों का फल इसी जन्म में मिल जाए बल्कि सत्य यह है कि जब तक ये भोग कर समाप्त नहीं हो जाते हैं तब तक इन कर्मों की गठरी भी साथ-साथ ही चलती रहती है। हमारे शास्त्रों में ऐसे अनेक प्रसंग हैं जिससे कर्म फल अगले जन्मों में भी मिलने की सत्यता प्रकट होती है:-

जब दुर्योधन की मृत्यु हो गई तो धृतराष्ट्र विलाप करते हुए श्री कृष्ण जी से कहते है:-

नूनं व्यपकृतं किचिंतमया पूर्वेषु जन्मषु।
येन मां दुःख भागेषु धाता कर्मसु युक्तवान्।
परिणामश्च वयसः सर्वबन्धुक्षयश्च मे।।

अर्थात् हे श्री कृष्ण हमने पूर्व जन्म में निश्चित रूप से बहुत पाप किए हैं इसी कारण विधाता की ओर से हमें यह दारुण दुःख प्राप्त हुआ है। मैं बूढ़ा हो गया हूँ और मेरे सभी बन्धु-बान्धव मृत्यु को प्राप्त हो गए हैं।

इसी प्रकार गान्धारी भी श्री कृष्ण जी के समक्ष विलाप करती हुई कहती है:-

नूनमाचरितं पापं मया पूर्वेषु जन्मषु।
या पश्यामि हतान् पुत्रान् पौत्रान् भ्रातरश्च माधव।

हे माधव मैंने निश्चित रूप में पिछले जन्म में बहुत से पाप किए हैं इसी कारण मैं अपने पुत्रों, पौत्रों और सभी भाईयों को मरा हुआ देख रही हूँ।

रामायण में भी ऐसे अनेक प्रसंग हैं मगर केवल दो को हम यहाँ उद्धृत करना उपयुक्त समझते हैं:-(वा० रा० ३-६३-४)

रामचन्द्र जी अपने अनुज लक्ष्मण जी से कहते हैं कि निश्चय ही मैंने पूर्वजन्म में अनेक बार मन चाहे पाप किए हैं। उन्हीं का फल आज मुझे प्राप्त हुआ है जिससे मैं एक दुःख से दूसरे दुःख को प्राप्त हो रहा हूँ। हे लक्ष्मण राज्य का नाश, घरवालों का छूटना, पिता का मरण, माता का वियोग ये मेरे शोक को बढ़ाते हैं।

इसी प्रकार सीता जी भी हनुमान जी से कहती है:-

भाग्य वैषम्ययोगेन पुरा दुश्चरितेन च।
मयैतत् प्राप्यते सर्वं स्वकृतं ह्युपभज्यते।। (वा०।। ३-३६)

अर्थात् मैंने पिछले जन्म में जो पाप किए हैं इसी के परिणाम स्वरूप मेरे भाग्य में यह विषमता आ गई है। मैं भी अपने पूर्वकृत का भोग प्राप्त कर रही हूँ क्योंकि अपने ही किए का फल भोगना पड़ता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्योद्देश्यरत्नमाला में कर्म के तीन प्रकार लिखे हैं- पहला शुभ, दूसरा अशुभ और तीसरा मिश्र भेद। अन्यत्र वे तीन भेद इस प्रकार करते हैं- १ क्रियमाण, २ संचित और ३ प्रारब्ध। जो वर्तमान में किया जाता है वह कर्म क्रियमाण कहाता है। जो क्रियमाण का संस्कार ज्ञान में जाना होता है उसे संचित कहते हैं और

जो पूर्व किए हुए कर्मों के सुख-दुःख रूप फल का भोग किया जाता है उसे प्रारब्ध कहते हैं। यही क्रियमाण कर्म कर्ता के अन्तःकरण (सूक्ष्म शरीर) पर जो संस्कार डालता है वह संचित कहाता है और वहीं जमा रहता है जब तक प्रारब्ध में नहीं जाता। इन्हीं संचित कर्मों से परमात्मा प्रारब्ध बनाते हैं और तदनुसार इस जीव को दूसरा शरीर प्राप्त होता है। प्रारब्धानुसार प्राप्त किया हुआ यह शरीर अपने शुभ-अशुभ कर्मों का फल सुख-दुःख रूप में अवश्य ही प्राप्त किया करता है।

इस प्रकार हम इस तथ्य पर पहुंचते हैं कि भाग्य का निर्माण हमारे अपने ही कर्मों के अनुसार होता है। अपने कर्मों के अनुसार ही जीव की मरने के पश्चात् तीन प्रकार की गति हुआ करती है। जिन जीवों ने केवल पाप ही पाप कर्म किए हों उन्हें परमात्मा अपनी न्याय व्यवस्था के अनुसार पशु-पक्षी आदि मनुष्य से निम्न योनियों में भेज देता है। इसमें भी जिसने अधिक जघन्य अपराध किए हों उन्हें उसी क्रम से निम्न, निम्नतर व निम्नतम योनियों में क्रमशः जन्म मिलता है। जिन जीवों ने कुछ कुकर्म और कुछ सुकर्म किए हों उन्हें सुकर्मों के बदले में मनुष्य शरीर मिलता है। मगर उससे पूर्व कुकर्मों के कारण निम्न योनियों में जाना पड़ता है। जिन्होंने निष्काम सुकर्म किए हों वे मनुष्य योनियों में मगर जिन्होंने निष्काम भाव से सुकर्म किए हों तथा परोपकार के लिए ही अपना जीवन लगाकर योग-ध्यान आदि की प्रक्रियाओं से गुजर कर वित्तैषणा, पुत्रैषणा और लोकेषणा से ऊपर उठ गए हों उन्हें मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

बृहदारण्यक उपनिषद् के अध्याय ३ ब्राह्मण ९/२७-२८ में इस सम्बन्ध में बहुत ही महत्वपूर्ण प्रसंग आया है। हालांकि गार्गी ने याज्ञवल्क्य से अपने दो कठिन प्रश्नों का उत्तर पाकर सभी विद्वानों में उन्हें सर्वश्रेष्ठ घोषित कर दिया था तथा विद्वानों को स्पष्ट शब्दों में कह दिया था कि अब इनसे प्रश्न करने का कोई औचित्य नहीं है। क्योंकि इन्हें कोई हरा नहीं सकता फिर भी शकल के पुत्र विदग्ध ने अपने विद्या अंहकार के कारण बहुत से प्रश्न कर डाले। माननीय याज्ञवल्क्य जी ने उसके समस्त प्रश्नों के उत्तर देने के पश्चात् उससे परम पुरुष ब्रह्म के बारे में प्रश्न किया, परन्तु विदग्ध उत्तर नहीं दे सका और वह हार गया, उसका सिर नीचे हो गया। पुनः याज्ञवल्क्य जी वहाँ उपस्थित विद्वानों से प्रश्न पूछते हैं और विद्वानों से उत्तर न पाने की स्थिति में स्वयं ही उत्तर भी दे देते हैं। इसी प्रसंग में एक बहुत गंभीर और सारगर्भित चर्चा कर्म सिद्धान्त के बारे में भी आती है। उन्होंने मानव शरीर की तुलना वृक्ष से करते हुए प्रश्न किया कि जबकि कुठार से कटा हुआ वृक्ष फिर नया होकर मूल से उग जाता है, तब मृत्यु से छिन्न हुआ वृक्ष की भान्ति नष्ट हुआ मनुष्य शरीर भी किस मूल से प्रकट होता है? यदि वीर्यमूल से प्रकट होता है सो ऐसा न कहो क्योंकि वह वीर्य तो जीते हुए-अन्य जीवित मनुष्य से सम्पन्न होता है इस मरे मनुष्य से नहीं। क्योंकि वीर्य से मरकर मनुष्य का मरकर जन्मना तो ''प्रत्यक्षताधानारूह'' दाने से उगे वृक्ष जैसा है, मूल से प्रकट होने जैसा नहीं। मूल से उत्पन्न होना भिन्न है। अतः वीर्य से मनुष्य पुनः प्रकट होता है यह उत्तर यथार्थ नहीं हुआ। जबकि वृक्ष मूलसहित उखाड़ दें तो फिर न उभरे, न उगे, न प्रकट हो-मानव शरीर भी मृत्यु से छिन्न हुआ किस मूल से प्रकट होता है-यह प्रश्न अभी ज्यों का त्यों है। अन्य विद्वानों से उत्तर ने मिलने पर स्वयं ही याज्ञवल्क्य जी ने उत्तर दिया कि आत्मा न उत्पन्न हुआ न होने वाला है, यह नित्य है मगर जो शरीर का धारण करना है वह यदि वीर्य से शरीर से बनता है तो वह तो दाने से वृक्ष बनने की भान्ति है पर शरीर छिन्न हो जाने पुनःपुनः जन्म का जो मूल है इसका अपना कर्म ही है। जो ईश्वर के अधीन है तथा ईश्वर ही कर्मफल दाता है। याज्ञवल्क्य जी ने कर्म को ही पुनः पुनः जन्मने का हेतु बताया है।

योगदर्शन में महर्षि पतंजलि लिखते हैं-सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः (यो० द० २-११) अर्थात् कर्म विपाक परमात्मा के द्वारा किया जाता है। उन्हीं अपने कर्मों के आधार पर जीव को जाति, आयु ओर भोग मिला करते हैं। इस जन्म में किए गए कर्मों का सबसे बड़ा व महत्वपूर्ण फल है-अगले जन्म में जाति अर्थात् मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट, पतंगे व स्थावर योनि का मिलना। योगदर्शन में ही अन्यत्र कहा है-

ते ह्लादपरितापफलाः पुण्यापुण्यहेतुत्वात्। (२-१४)

अर्थात् जो पूर्व कर्म से जीव को जाति, आयु और भोग मिलते हैं वे पुण्य हेतुक होने से सुख देने वाले होते हैं तथा पाप हेतुक होने से दुःख देने वाले होते हैं।

न्याय दर्शन में महर्षि गौतम जी ने एक सूत्र दिया है-**पूर्वकृतफलानुबन्धात् तदुत्पत्तिः (३-२-६३)** वात्स्यायन मुनि इस सम्बन्ध में लिखते हैं कि पूर्व शरीर में किए कर्मों के फलों के अनुबन्ध लगाव से वर्तमान शरीरोत्पत्ति होती है। शरीर की रचना पूर्वकर्मानुसार ही-पहले किए गए कर्मो के फलस्वरूप अदृष्ट-धर्माधर्म के सम्बन्ध (सहयोग) से शरीर की उत्पत्ति रचना होती है।

ऋग्वेद में एक मन्त्र आया हैः-

अयं देवाय जन्मने स्तोमो विप्रेभिरासया।

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

आत्मिक उन्नति

अमृत पद प्राप्ति के चार साधन

❑दीनानाथ सिद्धान्तालंकार

सब संसार को अच्छी तरह देख व समझकर विद्वान् पुरुष वैराग्य की भावना को प्राप्त करे। वह यह समझे कि किए हुए कर्म का फल बिना भोगे नहीं रहा जा सकता। पर इस तत्त्व ज्ञान को जानने के लिए हाथ में समिधा लेकर वह वेदज्ञ और ब्रह्म में संलग्न गुरु के पास जाए।

प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है कि वह अमृतपद को प्राप्त करे, पर बिना कुछ तैयारी के अनायास ही तो इन सोपानों पर चढ़ना संभव नहीं है। संसार के सामान्य कामों को करने के लिए भी पहले कुछ तैयारी की जाती है। एक आदमी मकान बनाना चाहता है, उसके लिए जमीन तो पहले वह लेगा ही, पर साथ ही ईंट, चूना, मिट्टी, सीमेंट, लकड़ी, पत्थर आदि की व्यवस्था भी करेगा। इसके बाद मकान बनाना शुरू करता है। अमृत पद=मोक्ष की प्राप्ति जीवन का लक्ष्य है। धर्म, अर्थ और काम के बाद ही मोक्ष की ओर प्रगति की जा सकती है। सामान्य व्यक्ति के लिए यह संभव नहीं कि वह सीधा ही मोक्ष की ओर छलांग लगा दे। इसलिए इस तैयारी के भी कुछ तरीके हैं।

सभा में उपस्थित कुछ श्रोताओं ने विनयपूर्वक ऋषिवर की सेवा में प्रार्थना की कि भगवन! हम स्वयं ही यह पूछना चाहते थे कि हमारे जैसे मामूली लोगों के लिए तत्काल इस अमृत मार्ग का अवलंबन करना सहज नहीं है, इसलिए पहले इस दिशा में चलने को हमें प्रेरणा प्राप्त हो और कुछ थोड़ी तैयारी भी कर सकें- ऐसी आप हमें कुछ शिक्षा दें। सत्संगियों की इस प्रार्थना को सुनकर अरुण ऋषि ने अपने मुखारविंद से कहना आरंभ किया-

सबसे पहले हमें यह दृढ़ निश्चय होना चाहिए-

दुर्लभं त्रयमेवैतद् देवानुग्रहहेतुकम्।
मनुष्यत्वं मुमुक्षुत्वं महापुरुष संश्रयः।।
यः प्राप्य मानुषं लोकं मुक्तिद्वारमपावृतम्।
गृहेषु खगवत्सक्तमारूढच्युतं विदुः।।

तीन चीजें अति दुर्लभ हैं, और ईश्वर अनुग्रह से ही प्राप्त होती हैं- (१) मनुष्य जन्म (२) मोक्ष=अमृत पद की प्राप्ति की भावना और (३) किसी महापुरुष=आचार्य=उत्तम गुरु का आश्रय। यह मानुष तन ही मुक्ति का द्वार है। इसे प्राप्त करके भी जो अपने घर के धंधों में ही पक्षी की तरह छुपा रहता है, उसे अपने उद्देश्य से पतित ही समझना चाहिए। जिस समय मानव यह पूरे विश्वास के साथ समझ लेगा कि यह मनुष्य जन्म बहुमूल्य है तो वह स्वभाव से इसकी रक्षा के लिए सावधान रहेगा। हर कोई कीमती चीज को संभालना चाहता है।

एक सत्संगी ने प्रश्न किया- भगवन्! क्या कारण है कि इतनी भौतिक उन्नति होने और आश्चर्यजनक वैज्ञानिक आविष्कारों के बाद भी- जिनसे मानव की सुख-सुविधाओं में अकल्पनीय प्रगति हो गई है, आभ्यन्तरिक दृष्टि से मानव के आनंद और शांति की मात्रा में किसी प्रकार की वृद्धि नहीं हुई है अपितु ह्रास ही हुआ है।

अरुण ऋषि- सत्संगी भाई का यह प्रश्न सर्वथा ठीक है। विज्ञान के द्वारा आज के मानव ने प्रकृति पर विजय प्राप्त कर ली और असंभव प्रतीत होने वाली बातों को संभव और सहज बना दिया है, पर इसके साथ-साथ जीवन सरल बनने की अपेक्षा अधिक समस्यापूर्ण बनता जाता है। इसका प्रधान कारण यह है कि विज्ञान की सहायता से मानव ने साधनों और उपकरणों को तो उन्नत किया है पर इनका प्रयोक्ता अर्थात् आत्मा अभी तक निचली सीढ़ी पर ही अटका हुआ है। जिस प्रकार कोई बरात बिना दूल्हे के चल रही हो, इसी प्रकार आज का मानव जीवन- सत्ता के आधार आत्मा को ताक में रखकर बाहरी ठाठ-बाठ में खूब बढ़ चढ़ गया है।

अरुण ऋषि ने इसी प्रसंग में कहा- बृहदारण्यक उपनिषद् में याज्ञवलक्य मैत्रेयी संवाद इस विषय पर बड़ा सार्थक प्रकाश डालता है। मैत्रैयी के इस प्रश्न पर कि 'यन्नु इयं भगो सर्वा पृथिवी वित्तेन पूर्णा स्यात् स्यान्वहं तेनामृता'? अगर यह सारी पृथ्वी बाह्य सुख साधनों से पूर्ण हो जाए तो क्या मैं सुखी हो जाऊंगी? ऋषि याज्ञवल्क्य ने कितने सारगर्भित शब्दों में कहा-

नेति नेति होवाच याज्ञवल्क्य। यथैवोपकरणवतां जीवितं तथैव ते जीवितं स्यात, अमृतस्य तु नाशास्ति वित्तेन।।

याज्ञवल्क्य ने कहा- नहीं! नहीं! जिस प्रकार बाहर के साधन संपन्न व्यक्तियों का जीवन होता है उसी प्रकार

तेरा जीवन हो जाएगा। इसका अभिप्राय: यह है कि बाहर के साधन जड़ होने से कभी भी चेतन आत्मा के लिए स्थिर आनंद के कारण नहीं बन सकते। इस पर मैत्रेयी ने क्या अच्छा उत्तर दिया-

येनाहं नामृता स्यां किमहं तेन कुर्याम्।।

जिससे मुझे अमृत पद की प्राप्ति नहीं हो सकती उसे लेकर मैं क्या करूंगी?

एक शिष्य- तब भगवन् इस अमृत पद की योग्यता को प्राप्त करने के उपाय क्या हैं?

अरुण ऋषि- आरंभ में ही मैंने कहा था कि एकदम छलांग मारकर अमृत पद तक पहुंचना संभव नहीं है। आप में से कईयों ने भी यही पूछा था। अत: उन साधनों का ही वर्णन करूंगा जिनसे अमृतपद की प्राप्ति हो सकती है।

विवेक

अरुण ऋषि ने कहा- ये साधन चार प्रकार के हैं। इन्हें 'साधन-चतुष्टय' कहा जाता है। इनमें पहला विवेक है। शंकराचार्य के शब्दों में विवेक का अर्थ है- 'नित्यानित्य वस्तुभेद: विवेक:' ऐसी बुद्धि का होना जिससे मनुष्य यह जान सके कि नित्य क्या है और अनित्य क्या है! आवश्यक और अनावश्यक का भेद जानने से और नित्य अथवा आवश्यक को अनित्य अथवा अनावश्यक की तुलना में प्राथमिकता न देने से ही मनुष्य दु:ख प्राप्त करता है। इसी विवेक का नाम बुद्धि वा 'धी' है, जिसकी गायत्री मंत्र में याचना की गई है। 'बुद्धिर्यस्य बलं तस्य' जिसके पास बुद्धि है, उसी के पास बल है। इसलिए विकसित विवेक शक्ति के बिना मानव कभी उन्नत नहीं हो सकता। नीतिकारों ने ठीक ही कहा है-

विवेकभ्रष्टानां भवति विनिपात: शतमुख:।।

जो विवेक से रहित व्यक्ति हैं, उनका पतन सैंकड़ों प्रकार से होता है। चंद्रगुप्त मौर्य को चाणक्य जैसा बुद्धिमान और नीतिज्ञ मंत्री मिला। नंद का एक मंत्री राक्षस था। वह भी बड़ा बुद्धिमान था। एक समय ऐसा आया जब चंद्रगुप्त हारने लगा और साथी छोड़कर भागने लगे। उस समय चाणक्य ने घोषणा की कि बेशक सब साथी चले जाएं पर मेरा एक साथी न जाए-

ये याता किमपि प्रधार्य हृदये पूर्वं गता एव ते।
ये तिष्ठन्ति भवन्तु तेऽपि गमने कामं प्रकामोद्यमा:।।
एका केवल साधन सेना शतेभ्योऽधिका।
नन्दोन्मूलन दृष्टिवीर्य महिमा बुद्धिस्तु मा गान्मम।।

जो कुछ स्वार्थ के कारण चले गए हैं, वे तो गए ही हैं। जो ठहरे हैं, वे भी चाहें तो जा सकते हैं। इन सब साधनों से सैंकड़ों गुना अधिक बलवती मेरी बुद्धि मुझसे अलग न हो-यही चाहता हूँ।

वैराग्य

अरुण ऋषि ने कहा- वैराग्य का मतलब संसार को छोड़कर भाग जाना अथवा अपने वर्णाश्रम के कर्तव्यों की उपेक्षा कर देना नहीं है। इसका अभिप्राय है कि जीवन यात्रा के विविध और बहुमुखी कर्तव्यों का नि:संग भाव से पालन करना। योगदर्शन में वैराग्य का लक्षण किया गया है-

दृष्टानुश्रविक विषयवितृष्णस्य वशीकार संज्ञा वैराग्यम्।।

आंख, कान आदि इन्द्रियों से जिन विषयों का ज्ञान होता है, उनमें किसी प्रकार की तृष्णा न रखना और उन पर नियंत्रण रखना, इसी का नाम वैराग्य है। शास्त्र यह नहीं कहते कि इन्द्रियों को फोड़ दिया जाए। जैसे कोई आदमी आंखें फोड़ दे व जीभ काट दे। उनका सदुपयोग करते हुए उन पर नियंत्रण रखना- यही सच्चा वैराग्य है। यह भी समझ लेना चाहिए कि गेरुएँ कपड़े पहन लेने से ही वैराग्य की भावना नहीं आ जाती। सफेद कपड़े पहनते हुए भी वैराग्य की भावना जाग्रत की जा सकती है। महाकवि कालिदास ने ठीक कहा है-

वनेऽपि दोषा: प्रभवन्ति रागीणाम्
गृहेऽपि पंचेन्द्रिय निग्रहस्तप:।।

राग युक्त पुरुष जंगल में रहते हुए भी पाप कर सकते हैं और गृहस्थ में रहता हुआ भी पांचों इन्द्रियों के संयम द्वारा तपस्वी रह सकता है। हमारे देश के इतिहास में इसका सबसे अच्छा उदाहरण विदेह राजा जनक का है। राज्य करते हुए भी वे सच्चे अर्थों में वैराग्य युक्त थे।

षटक सम्पत्ति

अरुण ऋषि ने अमृत पद प्राप्ति का तीसरा साधन षट्क संपत्ति अर्थात् छह संपत्तियों का होना आवश्यक बताया। वे हैं- (क) शम= मानसिक संयम
(ख) दम=इन्द्रियों का संयम
(ग) उपरति=दुष्ट पुरुषों से पृथक् रहना।
(घ) तितिक्षा= कष्ट सहन करने की शक्ति।
(ङ) श्रद्धा= ईश्वर, वेद और वेदानुकूल शास्त्र, आप्त जनों में निष्ठा तथा आचार्य, गुरुजन, पिता-माता आदि में भक्ति और विश्वास की भावना।
(च) समाधान= चित्त एकाग्रता।

मुमुक्षत्व

अरुण ऋषि ने कहा- चौथा साधन है मुमुक्षुत्व अर्थात् मोक्ष पद प्राप्त करने की प्रबल आकांक्षा। जिस चीज

(शेष पृष्ठ ३३ पर)

स्वास्थ्य चर्चा

प्राकृतिक चिकित्सा क्या है

❑आयुर्वेद शिरोमणि **डॉ॰ मनोहरदास अग्रावत** एन॰डी॰ 'विद्यावाचस्पति' (प्राकृतिक चिकित्सक)

प्रतिदिन डॉक्टरों की संख्या बढ़ रही है और साथ ही साथ अनगिनत औषधियों की भी। वहीं आज एक दृष्टि से देखा जाए तो प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रोग के चंगुल में फँसा मिलेगा। इससे स्पष्ट होता है कि औषधियाँ मनुष्य को न स्वस्थ रख सकती हैं और न कर सकती हैं। प्राकृतिक चिकित्सकों ने अपने अनुभवों से यह जाना है कि रसायन और औषधियाँ रोगों को दूर नहीं करती, बल्कि रोग व उसके लक्षणों को कुछ समय के लिए दूर करके बाहर निकलते हुए रोग को शरीर के भीतर ही दबा देती हैं। जैसे गांव या मोहल्ले में कूड़ा-कचरा इकट्ठा होकर बीमारी फैलाता है, वैसे ही शरीर की गंदगी न निकल पाने पर अंदर ही अंदर सड़ने लगती है। यही गंदगी सब रोगों की जड़ है।

निरर्थक खाद्य और पेय के कारण पैदा हुई सड़न, अपच और दवाओं के जहर, टीका और इंजेक्शन इस गंदगी को बढ़ाते हैं। शरीर से गंदगी निकालने की कुदरती कोशिश ही रोग है और रोग के उभरते लक्षण इस कोशिश का कुदरती नतीजा। वहीं कुदरती इलाज (प्राकृतिक चिकित्सा) इस गंदगी को शरीर से निकाल फेंकने में पूरी मदद पहुँचाते हैं और मनुष्य को सशक्त व सतेज बनाते हैं। इस नैसर्गिक उपचार में उपवास, फलाहार, संतुलित भोजन, पानी, मिट्टी, धूप, प्राणायाम, आसन, व्यायाम और मालिश बहुत सहायक होते हैं। इससे रोग दबते नहीं, जड़ से समाप्त हो जाते हैं।

धूप, हवा, मिट्टी, पानी और आकाश जो मनुष्य शरीर के भौतिक तत्त्व हैं, इनके माध्यम से ही प्राकृतिक चिकित्सा की जाती है। नेचुरल थैरेपी अथवा नैसर्गोपचार या प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति को फादर क्नॉइप, लुई कूने, बर्नर मैक फैडेन, एडोल्फजस्ट जैसे विदेशी चिकित्सकों ने नए-नए आयाम दिये। वहीं भारतीय डॉ॰ कुलरंजन मुखर्जी, डॉ॰ रघुबीर सिंह, डॉ॰ इकबाल कृष्ण जैमिनी, डॉ॰ राय बहादुर, डॉ॰ जानकीशरण वर्मा तथा गोरखपुर के डॉ॰ विट्ठलदास मोदी ने आश्रम (आरोग्य मंदिर) एवं प्राकृतिक चिकित्सा संस्थानों के माध्यम से नैसर्गोपचार को प्रतिष्ठित एवं लोकप्रिय बनाने में भरपूर प्रयास किया है।

स्वयं महात्मा गांधी ने पूना के समीप स्थित उरलीकांचन के नैसर्गोपचार आश्रम के द्वारा कुदरती इलाज (प्राकृतिक चिकित्सा) को जनप्रिय बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मोरार जी देसाई इसी आश्रम के अध्यक्ष रहे हैं। इसके अतिरिक्त बैंगलोर, गोरखपुर, हैदराबाद, उदयपुर तथा हनुमानगढ़ व अन्य कई स्थानों पर शासकीय प्राकृतिक चिकित्सालय हैं, जिनमें प्रतिदिन लाखों व्यक्ति अपना इलाज करवाकर गंभीर से गंभीर रोगों से मुक्ति पाते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा में शारीरिक-विकारों एवं अवरोधों को ही रोग का केन्द्र बिन्दु माना जाता है तथा उन्हें दूर करने के लिए धूप, मिट्टी, जल, उपवास, आसन एवं उत्सर्जन क्रिया में एनीमा जैसी चिकित्साविधियों पर अमल किया जाता है और उनके द्वारा गंभीर रोगों से त्राण पाया जाता है।

धूप से चिकित्सा हेतु रोगी के सिर पर ठण्डे पानी का तौलिया लपेट कर धूप में बिठाया जाता है। इस धूप स्नान में त्वचा से पसीना बहने लगता है। त्वचा के रोम-कूप अवरुद्ध होकर कई रोगों को जन्म देते हैं और इनके खुलने पर रोगों के विकार एवं अवरोधों से छुट्टी मिलती है। जी घबराना, सिरदर्द होना, चक्कर आना तथा शरीर में थकावट जैसे रोग इस विधि से दूर किये जाते हैं। विभिन्न रंगों के शीशों से रंगीन प्रकाश शरीर के विभिन्न हिस्सों पर डालने से भी रोग दूर किए जा सकते हैं, यह विधि-सूर्यकिरण चिकित्सा कही जाती है। पेट में जलन या दर्द हो और सिर में दर्द हो तो दर्द के स्थान पर हरी रोशनी डाली जाती है। छाती या कमर में दर्द हो तो पीली या नारंगी रोशनी दर्द के स्थान पर डालने से रोग (दर्द) दूर हो जाते हैं।

मिट्टी से चिकित्सा हेतु जमीन के नीचे से आधे हाथ गहरी मिट्टी को उपयोग में लाया जाता है, इससे फोड़ा पककर फूट जाता है। यदि आँखों में दर्द है, जलन है, तब आँख पर गीली मिट्टी की गेंद बनाकर रखने से आँखों की तकलीफ दूर हो जाती है। पेडू पर गीली मिट्टी की पट्टी रखने से कब्जियत जाती रहती है व सुबह एनीमा (बस्ती यंत्र) देने से पेट साफ हो जाता है। विषैले जानवरों के काटने पर मिट्टी का लेप राहतकारी होता है। अगर साँप काट खाये तो संबंधित व्यक्ति को गले तक मिट्टी में थोड़े समय तक रखने पर मिट्टी त्वचा के द्वारा सारा विष (जहर) सोखकर मनुष्य को स्वस्थ कर देती है। जल चिकित्सा के लिए गर्म, ठण्डे, कुनकुने पानी को काम में लाया जाता है। थकान दूर करने के लिए गर्म पानी में घुटने तक पैर रखना

तथा टॉसिल के लिए गले पर ठण्डे पानी की पट्टी चढ़ाने एवं अधिक बुखार में पूरे शरीर को गीली चादर में लपेटने से संबंधित रोग जाता रहता है। इसके अतिरिक्त शरीर का ताप कम करने के लिए सिर पर ठण्डी पट्टी रखना तथा त्वचा के रोम कूपों को खोलने में भाप स्नान फायदेमंद है।

संतुलित भोजन में उबली सब्जी, चोकर सहित आटे की रोटी, मौसमी फल एवं रस ही दिया जाता है तथा वसा, तेल, मसाले, कॉफी, चाय, तली हुई वस्तुएँ (कचोरी, समोसा, पकोड़ी) भुने हुए खाद्य पदार्थ एवं उत्तेजक आहारों से परहेज आवश्यक होता है। प्राकृतिक चिकित्सक उपवास को मान्यता देते हैं। आसन या योगासन नैसर्गिक चिकित्सा का मुख्य आयाम कहा जा सकता है। शलभासन सभी रोगों के लिए, चक्रासन नाड़ी शक्ति को बढ़ाने के लिए तथा सर्पासन पेट के प्रत्यंगों तथा मांसपेशियों को सबल बनाने के लिए उपयोगी है। प्राणायाम द्वारा ली जाने वाली गहरी व लम्बी सांसों से शारीरिक अंगों को तरोताजा रखकर मानसिक तनाव को दूर किया जाता है।

वैसे तो प्राकृतिक चिकित्सा सभी रोगों के लिए लाभप्रद है, अलबत्ता मधुमेह (डायबिटीज), अस्थमा (दमा) चर्मरोग एवं पेट के सभी रोग जिनमें सभी दूसरी चिकित्साएँ निरर्थक हो रही हैं उनमें प्राकृतिक चिकित्सा सफल होती है। इस चिकित्सा के लिए यह एक विडम्बना ही कही जाएगी कि कोई भी रोगी आजकल एलोपैथी, होम्योपैथी एवं आयुर्वेदिक दवाओं से निराश होकर इस चिकित्सा की शरण लेता है, तब तक रोग नासूर बन चुका होता है। यदि सर्वप्रथम इस चिकित्सा का आश्रय लें तो- निःसंदेह इससे लाभ उठाकर रोग को समूल नष्ट किया जा सकता है।

उदयपुर में अमलकांटा के ऊपर घास घर के पास सरकारी प्राकृतिक चिकित्सालय दीर्घकाल से संचालित है। इसी तरह निराश रोगियों का तीर्थस्थान-'नवनीत प्राकृतिक योग चिकित्सा धाम', जयपुर- आगरा राष्ट्रीय राजमार्ग पर स्थित है। (कार्यालय- नवनीत भवन, ९० कांतिनगर, स्टेशन रोड़, राजहंस होटल की गली, जयपुर-३०२००१) उत्तर प्रदेश में-भारत प्रसिद्ध (आरोग्य मंदिर) गोरखपुर- २७३००३ (उ०प्र०) एक आदर्श प्राकृतिक चिकित्सालय व शिक्षणालय है। (गुरुकुल कुरुक्षेत्र में आचार्य देवव्रत जी (राज्यपाल हिमाचल प्रदेश) के निर्देशन में सम्पूर्ण सुविधायुक्त व सफल प्राकृतिक चिकित्सालय चल रहा है- सं०)

यदि हमारा शासन दूसरी चिकित्सा की बजाय सौंवा हिस्सा भी इस पर व्यय करे तो यह बात दावे के साथ कही जा सकती है कि आज जो लोग दिन-प्रतिदिन एलोपैथी की ओर भाग रहे हैं, वे नेचुरल थैरेपी को अपनाने लगेंगे, क्योंकि यह चिकित्सा सरल एवं अल्प साधनों में भी महत्वपूर्ण असर प्रदान करती है।

-मनोहर आश्रम, उम्मैदपुरा, पो० तारापुर-४५८३३०, (जावेद-मध्यप्रदेश) जिला-नीमच

दूध है सम्पूर्ण आहार

ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो स्वस्थ नहीं रहना चाहता! स्वस्थ रहने के लिए आहार का सबसे पहला स्थान है। हमारा भोजन शुद्ध, सात्त्विक और पौष्टिक होना चाहिए। भोजन में दूध को पूर्ण आहार माना जाता है। देखा जाता है कि कुछ लोग दूध में रुचि नहीं लेते। कई बार माता-पिता को बच्चों को दूध लेने के लिए डांटते देखा जाता है। आईये दूध के गुणों के बारे में जानें।

मां का दूध शिशु के लिए सर्वोत्तम आहार होता है। मां का दूध छोड़ने के बाद उसे पशुओं के दूध पर निर्भर रहना पड़ता है। पशुओं में गाय का दूध सर्वोत्तम होता है जिसे माँ के दूध का स्थान दिया जा सकता है। दूध जीवन भर स्वस्थ रहने के लिए नियमित पीना चाहिए। दूध के बारे में कई बार अनेक लोग कई प्रकार के गिलत प्रचार करते हैं।

इस संबंध में डॉ० विनोद गुप्ता कहते हैं कि जो व्यक्ति शैशव से बुढ़ापे तक नियमित दूध का सेवन करते हैं उनका स्वास्थ्य उत्तम होता है। उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता अधिक होती है। दूध के सेवन से नेत्र ज्योति बढ़ती है क्योंकि इसमें विटामिन ए प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। दूध चर्मरोगों से भी रक्षा करता है। दूध में बी ग्रुप के विटामिन भी होते हैं जैसे विटामिन बी-२, बी-६, बी-७ तथा बी-१२। ये विटामिन शरीर की सामान्य कमजोरी को दूर करते हैं। दूध में उपलब्ध विटामिन डी रिकेट नामक बिमारी से बचाता है। दूध में खनिज व लवण भी भरपूर होते हैं। इसमें कैल्शियम, फास्फोरस, आयरन, कॉपर, मैगनीज, सोडियम, क्लोरीन, आयोडिन, कोबाल्ट आदि खनिज पदार्थ होते हैं। इससे हमारी हड्डियाँ मजबूत होती हैं, हृदय रोगों से बचाव होता है, रक्तचाप नियंत्रित रहता है तथा घेंघा रोग नहीं होता। दूध की चिकनाई से हमें ऊर्जा मिलती है। दूध पीते ही शरीर की थकान दूर हो जाती है। इससे हमारी मांसपेशियाँ सशक्त बनती हैं।

तो क्या सोचते हैं आप। इतना लाभकारी पदार्थ है दूध। यदि यह आपको मिले तो क्या आप मना करेंगे?

जानते हो!

❒आदित्य प्रकाश

◆इंडोनेशिया की वायु सेवा का नाम 'गरुड़' है।
◆हरद्वार का नाम पहले 'गंगाद्वार' था।
◆मनुष्य के बच्चे की अपेक्षा बन्दर का बच्चा अधिक बुद्धिमान होता है।
◆खरगोश बिना सिर घुमाए पीछे की ओर देख सकता है।
◆गिद्ध सात मील दूर तक देख सकता है।
◆शुतुरमुर्ग की आंखें उसके दिमाग से भी बड़ी होती हैं।
◆एक पैंसिल से हम पचास हजार शब्द लिख सकते हैं।
◆ज्ञान तंतुओं से दिमाग तक संदेश जाने की गति अधिकतम 532 किलोमीटर प्रतिघंटा रहती है।
◆हमारी हड्डियाँ कंकरीट से ज्यादा मजबूत ग्रेनाईट से ज्यादा कड़ी परन्तु इन दोनों से काफी हल्की होती हैं।
◆शरीर की अधिकांश गरमी सिर से बाहर निकलती है।

☺☺☺हास्यम्☺☺☺

प्रस्तुति : हर्षित सोनी

❖पत्नी (पति से) जब तुम कार मोड़ते हो तो मुझे बड़ा डर लगता है। कहीं एक्सीडेंट न हो जाए।
पति : इसमें डरने की क्या बात है? तुम भी मेरी तरह आँखें बंद कर लिया करो।

❖नौकर मालिक से साहब, आप के यहाँ काम करते हुए मेरे बाल सफेद हो गए लेकिन आपने मेरी तनखाह नहीं बढ़ाई?
मालिक : ठीक है, बढ़ा देंगे, अभी यह दस रुपये का नोट लो और बाजार जाकर अपने बाल काले करवा आओ।

❖पहला कैदी–''तुम जेल में कैसे आ गए ?''
दूसरा–''रस्सी चुराने के अपराध में''
पहला – (आश्चर्य से) ''ऐसा कैसे हो सकता है ?''
दूसरा – ''ऐसा ही हुआ है। दर असल रस्सी के दूसरे सिरे पर भैंस बँधी थी।''

❖एक मित्र : 'क्या यह सही है कि हर व्यक्ति को एक दिन मरना है?'
दूसरा : 'हाँ, यह एकदम सच है।'
पहला : मैं सोचता हूँ, जो आदमी सबसे आखिर में मरेगा, उसे शमशान घाट कौन ले जाएगा?

❖डाक्टर–(मरीज से) दवाई जल्दी असर करेगी, तुम अपने मन में यह सोचो कि तुम ठीक होते जा रहे हो।
मरीज 'जी अच्छा' कहकर चलने लगा तो डाक्टर ने कहा–''मेरी फीस तो देते जाओ?''
रोगी–'जी, आप भी अपने मन में सोच लीजिए कि आपको फीस मिल गई है।'

प्रहेलिकाः

❒अनुव्रत आर्य

* टिमटिम करते कितने प्यारे
चंदा मामा के रखवारे
* टिकटिक करती चलती जाऊँ,
सबको सही समय बतलाऊँ
देर होने से तुम्हें बचाऊँ
समय का पाबन्द बनाऊँ
* हवा का एक खिलौना, जब हाथ छूट जाए
आसमान में उड़ता जाए, बच्चा हाथ देखता रह जाए
* आर चलूँ पार चलूँ
सब्जियों को फाड़ चलूँ
* फिरती कली–कली रंग–बिरंगी प्यारी–प्यारी
हर फुलवारी देख मुझे बच्चे करते पकड़ने की तैयारी
* ऊपर जाऊँ, नीचे आऊँ
सावन में मैं धूम मचाऊँ
* दो पांव और दो सिर, ऐसा प्राणी रहे हर घर
जो कोई उसके बीच में आये, कट कट कट कटता जाये।।
* काटते हैं, पीसते हैं, बांटते हैं, पर खाते नहीं।

तारे, घड़ी, गुब्बारा, चाकू, तितली, झूला, कैंची, ताश

विचार कणिकाः

❒प्रतिष्ठा

❒ सुस्त व्यक्ति समाज के माथे पर कलंक का टीका है।
❒ पढ़ना बहुत जानते हैं, पर क्या पढ़ना चाहिए यह बहुत कम जानते हैं।
❑ उन्नति करना चाहते हो तो प्रतिदिन आत्मनिरीक्षण अवश्य करो।
❑ त्याग से यश और अभ्यास से विद्या प्राप्त होती है।
❑ परिश्रम वह चाबी है, जो खुशहाली के सभी द्वार खोल देती है।
❑ संघर्ष नहीं तो संकल्प नहीं और संकल्प नहीं तो समर्पण नहीं।
❑ जीवन में जितनी चुनौतियाँ होंगी उतने ही तुम बड़े हो जाओगे।
❑ वे कितने निर्धन हैं जिनके पास धैर्य नहीं।
❑ बिना अनुभव के कोरा ज्ञान अधूरा है।
❑ अंधेरे से क्यों घबराते हो, भाग्य का सूर्य अंधेरे में ही उदय होता है।
❑ आप अपनी शक्तियों को पहचानो, संसार आपको पहचानेगा।
❑ प्रसिद्ध होने की अपेक्षा ईमानदार होना अधिक अच्छा है।
❑ एक ज्ञान के कण में हजारों अनुभवों का निचोड़ होता है।
❑ समय और सागर की लहर किसी की प्रतीक्षा नहीं करते।
❑ सम्पन्नता मित्र बनाती है, विपदा परखती है।

आओ कुछ करें

पानी की टोंटी

भीषण गर्मी पड़ रही थी। चमन अपनी साईकिल से बाजार में किसी काम से घूम रहा था। उसे बड़े जोरों की प्यास लगी। उसने इधर-उधर नजर दौड़ाई तो एक पानी की टंकी दिखाई दी, पास जाकर टोंटी घुमाई तो टंकी खाली थी। थोड़ा और आगे जाने पर चमन को दूसरी टंकी दिखाई दी। पास जाकर देखा तो यह भी पहली वाली की तरह ही निकली। हताश-निराश चमन हाँफता हुआ थोड़ा और आगे बढ़ा तो उसे फिर एक टंकी दिखी, उस पर एक व्यक्ति मुंह-हाथ धो रहा था। यह देख चमन पास ही में एक पेड़ के नीचे खड़ा होकर उस व्यक्ति के जाने का इंतजार करने लगा। कुछ समय बाद वह व्यक्ति पानी की टोंटी चालू हालत में छोड़कर चला गया। चमन ने पानी पिया और टोटी बंद कर आगे अपने काम से चल दिया। चमन को उस व्यक्ति का इस तरह टोंटी चालू छोड़ना अच्छा नहीं लगा। तभी चमन को एक और टोंटी खुली दिखी जिससे लगातार पानी बह रहा था। चमन ने टोंटी बंद की और सोचने लगा- लोगों के इस तरह के व्यवहार से काफी पानी बर्बाद हो रहा है, इसीलिए अधिकांश प्याऊ की टंकियाँ हमेशा खाली रहती हैं। क्यों न ऐसा कुछ किया जाये कि लोग टोंटी बंद करना न भूलें। उसके दिमाग में एक आईडिया आया-

घर पहुंचने पर अपने लैपटॉप पर उसने एक पोस्टर तैयार किया, जिस पर लिखा था- कृपया पानी पीकर टोंटी बंद करना न भूलें।' पोस्टर की कई प्रतियां प्रिंट कराईं और साईकिल लेकर निकल पड़ा। अपने शहर में उसे जहाँ भी प्याऊ नजर आती उसी पर एक पर्चा चिपका देता। शाम तक तमाम जगहों पर उसने पर्चे चिपका दिये।

दूसरे दिन अपने काम का असर देखने चमन शहर गया। उसने देखा- एक भी टोंटी उसे खुली हालत में नहीं मिली। एक जगह उसने रुक कर देखा। एक व्यक्ति पानी पीता है और थोड़ा आगे बढ़ जाता है, तभी वह वापिस लौटता है, पर्चा पढ़ता है और पानी की टोंटी बंद कर चला जाता है। यह देख चमन बहुत खुश होता है। आखिर उसके एक छोटे से प्रयास ने उसके शहर की दम तोडती प्याऊओं को बचा लिया।

मुकेश कुमार ऋषि वर्मा

शिवाजी के गुरु

डॉ० राजेन्द्र दीक्षित

समर्थ गुरु स्वामी रामदास का जन्म सम्वत १६६५ वि० में हुआ था। स्वामीजी के पिता का नाम सूर्याजी पंत तथा माता का नाम रेणुकाबाई था। आपके माता-पिता की धार्मिक प्रवृत्ति होने के कारण आपको बचपन में 'नारायण' नाम से पुकारते थे। माता-पिता ने १२ वर्ष की आयु में आपका विवाह निश्चित कर दिया, किन्तु नारायण विवाह मण्डप से चुपके से भाग गए।

स्वामी रामदास अगले १२ वर्षों तक कठिन तप करते हुए भगवान की भक्ति करते रहे। समर्थ गुरु स्वामी रामदास ने संवत १७०१ वि० में कृष्णा नदी के तट पर अपना स्थाई स्थान बनाकर वहीं अगले वर्ष रामनवमी का उत्सव धूमधाम से मनाया। सम्वत् १७०६ वि० में चाफल के निकट शिगणवाड़ी नामक स्थान पर इतिहास प्रसिद्ध छत्रपति शिवाजी को शिष्य बनाया और उन्हें उपदेश देकर राष्ट्रीय चेतना का उदात्त रूप प्रस्तुत किया।

सम्वत् १७१२ वि० में समर्थ गुरु रामदास महाराज शिवाजी के राजद्वार सतारा पहुंचे, जहाँ शिवाजी ने एक पत्र लिखकर अपनी समस्त सम्पत्ति और राज्य का दान करते हुए पूज्य गुरुदेव की झोली मे डाल दिया और पीछे-पीछे स्वयं भी चल पड़े। समर्थ गुरु उन्हें दीन दुखियों की सेवा में पूर्ण निष्ठा का उपदेश करते हुए राजधर्म को यथाविधि पालन करने का आदेश दे कर आगे बढ़ गए।

शिवाजी महाराज के निधन के लगभग डेढ़ वर्ष बाद समर्थ गुरु रामदास का ७३ वर्ष की आयु में भगवान राम की मूर्ति के सामने ही देहावसान हो गया। स्वामी रामदास द्वारा सरल और सुबोध छंदों में प्रणीत 'दासबोध' नामक ग्रंथ है। जिसे उनकी 'आध्यात्मिक आत्मकथा' कहा जा सकता है। इसमें 'निवृत्ति' और 'प्रवृत्ति' मार्गो का समन्वय करते हुए ब्रह्मज्ञान और कर्मकांड को सम्पृक्त कर साधना के उच्चादर्शों का निरूपण किया गया है। 'दासबोध' में आपने स्वार्थ और परमार्थ के पारस्परिक संबंधों की सरल विवेचना करते हुए इसके अध्यात्म पक्ष को उजागर किया है।

(विक्रमी संवम् 2075 = ईस्वी सन 2018)

भजनावली

सच्चा श्राद्ध

❒सहदेव समर्पित

जीते जी का ही होता है सच्चा श्राद्ध बुजुर्गों का।
तन मन धन से सेवा कर लो आशीर्वाद बुजुर्गों का।।

फटे पुराने वस्त्र त्याग कर नये वस्त्र धारण करता।
जीव आत्मा भवसागर में आता और गमन करता।।
शरीर-आत्मा योग जन्म है और वियोग मरण करता।
गीता में यह साफ लिखा है योगिराज वर्णन करता।।
जन्म स्थान का पता नहीं मरने के बाद बुजुर्गों का।।१।।

कर्मों के अनुसार जीव फिर नई देह में बसता है।
करने में स्वातंत्र्य जीव का भोगने में परवशता है।।
देह त्याग देने पर उससे शेष नहीं कुछ रिश्ता है।
उन तक भोजन छादन की ना कोई डाक व्यवस्था है।।
जीते जी ही तर्पण कर सकती औलाद बुजुर्गों का।।२।।

जीते जी भूखे नंगे अब काग जिमाये क्या होगा!
मरने के पश्चात् हाड गंगा पहुंचाये क्या होगा।
जीते जी ना सुनी मृत्यु पर गरुड़ पढ़ाये क्या होगा!!
जीते जी गुड़ को तरसे अब खाण्ड गलाये क्या होगा!
जीवन भर का त्याग समर्पण करलो याद बुजुर्गों का।।३।।

पितृ यज्ञ है नित्य कर्म यह श्रद्धा सहित समर्पण है।
पितर रहें संतुष्ट सदा सच्चे अर्थों में तर्पण है।।
है पिण्डदान भोजन-छादन नित प्रेम सहित संभाषण है।
आज्ञा पालन ही 'सहदेव' पितरों का सच्चा पूजन है।।
घर खुशियों से भर देता मन का आह्लाद बुजुर्गों का।।४

भजन : तर्ज : हाथ जोड़ के कहूँ पिताजी

ओ भोले नादान मुसाफिर किस गफलत में सोवै।
रै तू ओम भज्या कर ना जिन्दगानी खोवै।।

परमेश्वर का द्वारा प्यारा जो मांगे सो पावै।
उस ईश्वर नै छोड़ के पगले दर-२ धक्के खावै।।
जन्म अमोला व्यर्थ गंवावै, क्यों तू नाव डुबोवै।।१।।

चार दिनां की तेरी जवानी बातां मैं ढ़ल ज्यागी।
तेरे तन की माटी भोले माटी मैं मिल ज्यागी।।
जल ज्यागी या देह राख मैं जिस पै तू जंग झौवै।।२।।

इस दुनिया की चमक चांदनी तेरा मन ललचावै।
यू पापी चंचल मन तेरा ना काबू मैं आवै।।
जावै बीत्या बखत अमोला वक्त गए क्या हौवै।।३।।

मन वच कर्म एक कर प्यारे उसतै प्रीत लगाले।
जो चाहवै कल्याण तेरा तो ईश्वर के गुण गाले।।
तू 'सहदेव' प्रभु नै ध्याले ना पाछे तै रोवै।।४।।

मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः

विषय वासना में फंस के क्यों नष्ट करो जीवन नै।
यू मन नाश करणिया हो सै काबू राखो मन नै।।

यू मन सै चालाक चोरटा बचियो इस के डर तै।
पता नहीं यू के करवादे भोले भाले नर तै।।
भाइयां नै भाइयां तै खोदे घर वालां नै घर तै।
बड़े बड़े घबराते देखे इसके जुल्म कहर तै।।
चलता रहता है हरदम ना खाली बैठे क्षण नै।।१।।

मल विक्षेप आवरण इसके दोष कहे जावैं सैं।
जिनमें फंस कै जीव अनेकों कष्ट सहे जावैं सैं।।
इनमैं फंस कै दुःखधारा में सदा बहे जावैं सैं।
इनतै बच कै ज्ञान मिलै फिर मोक्ष गहे जावैं सैं।।
ज्ञान कर्म और उपासना की सही राह चालण नै।।२।।

काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह ये इसमैं डेरा डालैं।
जब चाहवैं हम सही चलाणा तब ये उलटे चालैं।।
यैं दुश्मन हों सैं माणस के कदे घाट ना घालैं।
पल दो पल मैं यैं माणस नैं अपणा दास बणालैं।।
मन का दास बण्यां पाछे के बाकी कहण सुणन नैं।।३।।

योग मार्ग में ला दो मन नैं गर काबू करणा सै।
तीन ऐष्णा त्याग हृदय में परमेश्वर शरणा सै।।
परमपिता के पास लगो जो भवसागर तरणा सै।
इन्द्रियों के वश में होकै के जीणा मरणा सै।।
मोक्ष वरो सहदेव समर्पित छोड़ो जन्म मरण नै।।४।।

मान्धाता च महीपति कृतयुगालंकारभूतो गतः।।

श्लोक का भावानुवाद

मान्धाता महाराज गए जो सतयुग के शृंगार कहाए।
सागर पर पुल बांधा जिसने, राम गए जो राम कहाए।।
और बहुत से युधिष्ठिर जैसे चले गए ना लौट के आए।
धरा किसी के साथ गई नहीं शायद साथ तुम्हारे जाए।।

आर्य रत्न भामाशाह

ठाकुर विक्रमसिंह जी का अमृत महोत्सव मनाया गया

क्षत्रियों कुल गौरव, दानवीर भामाशाह आर्यरत्न श्री ठाकुर विक्रम सिंह जी का अमृत महोत्सव बड़े ही हर्षोल्लास के साथ गत १९ सितंबर को इंडिया इंटरनेशनल, लोधी स्टेट, नई दिल्ली में मनाया गया। इस भव्य समारोह की अध्यक्षता स्वामी प्रणवानंद सरस्वती ने की। मंच का संचालन डॉ॰ धर्मेन्द्र कुमार जी द्वारा किया गया। विभिन्न प्रांतों से आए ख्याति प्राप्त संन्यासी, विद्वान्, धर्माचार्य, आचार्य/आचार्या, भजनोपदेशकों व कार्यकर्त्ताओं को आर्यन परिवार द्वारा अमृत महोत्सव में सम्मानित किया गया। लगभग ७५ गणमान्यों को भेंटस्वरूप शॉल, साहित्य और दक्षिणा स्वरूप चैक भेंट किये गये।

ठाकुर विक्रमसिंह जी द्वारा अपना अमूल्य जीवन आर्य समाज की सेवा में समर्पित कर वैदिक धर्म, मानवता और राष्ट्र सेवा में लगाने के संकल्प को अद्वितीय मानते हुए विभिन्न प्रांतों से आए महानुभावों ने ठाकुर विक्रम सिंह जी के अमृत महोत्सव को अभूतपूर्व कार्यक्रम बताया। इस अविस्मरणीय अमृत महोत्सव में कुंवर प्राज्ञ आर्य, कुं॰ राहुल आर्य, कुं॰ इंद्रवीर आर्य, डॉ॰ वरुणवीर जी के उद्‌बोधन को सुनने के लिए लोगों में भारी उत्साह था। डॉ॰ वरुणवीर जी ने कामना की यह अवसर जीवन में बार-बार आए और आर्यसमाज, वैदिक प्रचार-प्रसार के लिए मिल जुलकर भविष्य में काम करते रहें। डॉ॰ सुब्रह्मण्यम स्वामी, डॉ॰ वेदप्रताप वैदिक और श्याम जाजू जी ने ठाकुर साहब के अमृत महोत्सव पर दीर्घ जीवन हेतु शुभकामनाएं प्रकट कीं। गणमान्य वक्ताओं ने अपने-अपने संदेश में ठाकुर विक्रमसिंह के जीवन को वर्तमान एवं आने वाली नई पीढ़ी के लिए प्रेरणास्रोत बताया। समारोह के अध्यक्ष स्वामी प्रणवानंद जी ने ठाकुर विक्रम सिंह को शुभाशीर्वाद और दीर्घायु होने का आशीर्वचन प्रदान किया।

द्वारा : रामचरण गुप्ता,
फोन ९५९९१०७२०७, ९३५४६१३०१८

ओ३म्
चौधरी अभयसिंह आर्य धर्मार्थ न्यास के तत्वाधान में

यजुर्वेद पारायण यज्ञ

17 अक्टूबर 2018 से 21 अक्टूबर 2018 तक

परमेश्वर की कृपा से हमारे परिवार में आचार्य हरिशंकर अग्निहोत्री जी वैदिक प्रवक्ता आगरा के ब्रह्मत्त्व में यजुर्वेद पारायण यज्ञ का आयोजन किया जा रहा है। आपसे प्रार्थना है कि कार्यक्रम अनुसार पहुंचकर कृतार्थ करें।

यज्ञ स्थल : आर्यसमाज मंदिर रामनगर रोहतक रोड जींद
कार्यक्रम : 17 अक्टूबर से 20 अक्टूबर तक प्रतिदिन प्रातः 7:30 से 10:30 तक तथा सायं 2:30 से 5:30 बजे तक
पूर्णाहुति : 21 अक्टूबर 2018 प्रातः 8:00 से 1:00 बजे तक

कृपया पूर्णाहुति के बाद प्रीतिभोज ग्रहण करें

निवेदक
अभय सिंह आर्य पूर्व प्रधान
नगर पालिका एवं नगर सुधार मंडल जींद (98969 05253)

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर हुआ समारोह

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के शुभ पर्व पर ग्राम गंगायचा अहीर बीकानेर जिला रेवाड़ी में प्रोफेसर धर्मवीर नंबरदार के निवास पर हवन यज्ञ का आयोजन जिला रेवाड़ी वेद प्रचार मंडल के संरक्षक व सरस्वती गौशाला के संचालक स्वामी जीवानंद जी नैष्ठिक के ब्रह्मत्व में संपन्न हुआ। प्रोफेसर धर्मवीर के दोनों पुत्र संजीव आर्य, रविंद्र आर्य तथा पुत्रवधु सौभाग्यवती चश्मा व रीना आर्य के अतिरिक्त सभी पारिवारिक सदस्यों सहित सैंकड़ों महिलाओं व पुरुषों ने यज्ञ में आहुतियां डालकर भगवान श्रीकृष्ण को याद किया। स्वामी जीवानंद जी व प्रोफेसर धर्मवीर नंबरदार ने यज्ञोपरान्त श्रीकृष्ण जी के जीवन की प्रमुख घटनाओं का वर्णन किया तथा उनके बताए मार्ग पर चलने का आह्वान किया। आयोजन में प्रमुख रूप से कैप्टन भवानी प्रसाद, अशोक आर्य, वेद पाल आर्य, कृष्ण सैनी, नरेश स्वामी पंचायत ब्लॉक समिति रेवाड़ी, रामचंद्र, कैप्टन मुंशीराम, ज्ञानचंद, नरेश यादव सुंदरलाल, छोटेलाल, श्रीमती विमला, बहन सुशीला, चंद्रबाला रेवती देवी, राजबाला आदि उपस्थित रहे। (अशोक कुमार आर्य)

पंचकूला में दो दिवसीय कार्यशाला

आर्यावर्त के ही मूल निवासी हैं आर्य : प्रो० मित्तल

पंचकूला, अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना के राष्ट्रीय अध्यक्ष प्रोफेसर सतीश चंद्र मित्तल ने कहा है कि आर्य भारत में बाहर से नहीं आए, ये यहीं के मूल निवासी हैं। शोध का विषय तो यह है कि आर्य भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार करने के लिए किन-किन देशों में कहाँ-कहाँ गए। नवीनतम स्रोतों से अब यह साबित हो चुका है कि मिस्र की सभ्यता विश्व की प्राचीनतम सभ्यता नहीं है। सिंधु घाटी की सभ्यता उससे हजार साल पुरानी है। प्रो० मित्तल २२ सितम्बर को यहाँ मनसा देवी मंदिर परिसर के लक्ष्मी निवास में हरियाणा इतिहास एवं संस्कृति अकादमी कुरुक्षेत्र एवं अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना नई दिल्ली के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित दो दिवसीय कार्यशाला के पहले दिन मुख्य वक्ता के रूप में संबोधित कर रहे थे। उन्होंने बताया कि इतिहास संकलन योजना का उद्देश्य इतिहास का पुनर्लेखन नहीं, बल्कि इतिहास का वैज्ञानिक, तार्किक, तटस्थ तथा प्रामाणिक सही लेखन है। इस विषय में योजना के तहत देशभर में हजारों विद्वान् इतिहास तथा शोधकर्ता कार्य कर रहे हैं। उन्होंने बताया कि हरियाणा के युवा अत्यंत पराक्रमी, संघर्षशील तथा जुझारू रहे हैं। विदेशी आक्रमणकारियों के साथ हरियाणा की भूमि पर हुए अनेक युद्ध उनके पराक्रम के उदाहरण हैं। (दै ट्रि २३ सितम्बर, २०१८)

अंग्रेजों का लिखा इतिहास प्रामाणिक नहीं

हिमाचल तकनीकी विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ० एस पी बंसल ने कहा कि अंग्रेजों द्वारा लिखा गया भारतीय इतिहास प्रामाणिक नहीं है। यह भारतीयों के मनोबल को गिराने के लिए लिखा गया। भारतीय संस्कृति की रक्षा के लिए संस्कृत का अध्ययन आवश्यक है। इस कार्यशाला को भारतीय इतिहास संकलन समिति के अध्यक्ष डॉक्टर बीवी कौशिक, अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना नई दिल्ली के सचिव सुरेंद्र हंस, हरियाणा इतिहास एवं संस्कृति अकादमी के सहायक निदेशक डॉक्टर जगदीश प्रसाद, माता मनसा देवी पूजा स्थल बोर्ड के पूर्व सचिव पृथ्वीराज ने भी संबोधित किया। संयोजक डॉ० प्रशांत गौरव ने बताया कि कार्यशाला में १०० से अधिक विद्वान तथा शोध छात्रों ने भाग लिया।

आर्यसमाज टटीरी की नई प्रशासक समिति का गठन

बागपत, अग्रवाल मंडी, टटीरी कस्बे में आर्यसमाज की नई प्रशासक समिति का गठन कर दिया गया, जिसके बाद यज्ञ का आयोजन किया गया। यज्ञ में आहुति देकर सभी ने सत्य निष्ठा और ईमानदारी के साथ कार्य करने का संकल्प लिया। अग्रवाल मंडी टटीरी कस्बे में आर्यसमाज शपथ ग्रहण समारोह का आयोजन किया गया। इससे पूर्व सैकड़ों आर्य जनों के द्वारा यज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें लोगों ने आहुति दी। आर्य प्रतिनिधि सभा लखनऊ के द्वारा आर्यसमाज टटीरी की जांच की गई थी जिसमें भारी भ्रष्टाचार, अनियमितताएं, पैसे का गबन होने पर लखनऊ सभा ने यहां की समिति को भंग कर दिया था। आर्यसमाज टटीरी के सुचारू संचालन के लिए लखनऊ सभा द्वारा एक प्रशासक समिति का गठन किया गया, जिसमें जसपाल सिंह एडवोकेट, करतार सिंह पहलवान, मनोज आर्य, अशोक सिंघल, देवेंद्र सिंह की कार्यकारिणी को जिला सभा प्रधान प्रधानाचार्य रामपाल सिंह तोमर के द्वारा शपथ दिलाई गई। प्रशासक जसपालसिंह राणा ने कहा कि हम आर्यसमाज की विचारधारा व उत्थान के रचनात्मक कार्य पूरी निष्ठा के साथ टीम भावना के साथ करेंगे।

(रिपुदमनसिंह तोमर, जिला सभा महामंत्री 9868214782)

आर्यसमाज बीकानेर गंगायचा अहीर का वार्षिकोत्सव भव्यता से सम्पन्न हुआ

रेवाड़ी, गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी आर्यसमाज बीकानेर गंगायचा अहीर जिला रेवाड़ी का ७६ वां वार्षिकोत्सव २२ से २३ सितंबर २०१८ को आर्यसमाज के प्रांगण में धूमधाम से संपन्न हुआ। इस कार्यक्रम में सर्वश्री स्वामी आर्यवेश जी, प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, मास्टर रामपाल जी, प्रधान हरियाणा आर्य प्रतिनिधि सभा, आचार्य विजयपाल जी, आचार्य सोमदेव जी अजमेर, आचार्य यशदेव आर्य प्रधान जिला वेद प्रचार मंडल, स्वामी जीवानंद जी नैष्ठिक, स्वामी ब्रह्मानंद जी एकांती, सौम्य मुनि बैरावास कलां, डॉ० रवि चौहान, श्री रघुनाथ सिंह, आचार्य सत्यव्रत, आचार्य विश्वपाल जी, सहदेव समर्पित संपादक शांतिधर्मी, श्री हरिओम शास्त्री म० हरि सिंह जी तिनकीरूडी, म० धर्मपाल आर्य इशरोदा, पंडित बंसी राम जी, सहदेव सिंह बेधड़क, पंडित कुलदीप भास्कर, सुश्री धर्मरक्षिता, बहन कल्याणी आर्या तथा आदि वरेण्य जनों ने पधार कर कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। दोनों दिन भारी संख्या में श्रद्धालु श्रोता उपस्थित होकर विद्वानों के विचार श्रवण करते रहे। सभी आगंतुकों के लिए अति सुंदर भोजन व्यवस्था की गई थी। आयोजन को सफल बनाने के लिए आर्यसमाज के सभी सदस्यों प्रो० धर्मवीर, डॉ० महेन्द्र जी, अशोककुमार आर्य, ग्रामवासियों ने भरपूर आत्मीय सहयोग किया। कार्यक्रम का संचालन क्षेत्र के प्रतिष्ठित विद्वान श्री रामकिशन शास्त्री जी ने किया।

ऋग्वेद यजुर्वेद ॥ ओ३म् ॥ सामवेद अथर्ववेद

मानव सेवा प्रतिष्ठान

60बी, हुमायूँपुर, नई दिल्ली-110029

एवं

नोर्थ अमेरिकन जाट चैरिटि

व

जाट मित्र मण्डल (दिल्ली)

के संयुक्त तत्वाधान में

छात्रवृत्ति एवं प्रतिभा पुरस्कार

का

भव्य आयोजन

दिनांक : 4 नवम्बर 2018 * समय : प्रातः 8 बजे से 1 बजे तक

स्थान : दीनबन्धु छोटु राम भवन, केशव पुरम्, दिल्ली-110 035

(निकट केशवपुरम् मैट्रो स्टेशन)

निवेदक :

चन्द्रदेव शास्त्री	डॉ. कँवरसिंह शास्त्री	रामपाल शास्त्री	आजाद सिंह लाकड़ा
(प्रधान)	(महामन्त्री)	(कार्यकर्त्ता प्रधान)	(प्रधान जाट मित्र मण्डल)

सम्पर्क सूत्र :

9810283782, 9968357535, 9868365727, 9416711417,
9811449292, 9999027992, 9811912085,
9968914743, 011-27191627

कर्म से ही प्रारब्ध -- पृष्ठ २१ का शेष

अकारि रत्नधातम् (ऋ० १-२०-१)

महर्षि दयानन्द जी महाराज इसका अर्थ करते हैं-मनुष्यैः यादृशानि कर्माणि क्रियन्ते तादृशानि जन्मानि भोगाश्च प्राप्यन्ते अर्थात् मनुष्य जैसे कर्म करता है वैसा ही उसको जन्म और भोग प्राप्त होते हैं। महर्षि जी ने सत्यार्थ प्रकाश के नवम् समुल्लास के अन्त में मनु के कुछ श्लोक लिखे हैं जिनसे इस विषय पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है:-

शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरतां नरः।
वाचिकैः पक्षिमृगतां मानसैरन्त्यजातिताम्।। (१२-९)

जो नर शरीर से चोरी, परस्त्रीगमन, श्रेष्ठों को मारने आदि दुष्ट कर्म करता है उसको वृक्षादि स्थावर का जन्म, वाणी से किए पाप कर्मों से पक्षी और मृगादि तथा मन से किए दुष्ट कर्मों से चाण्डाल आदि का शरीर मिलता है।

देवत्वं सात्त्विका यान्ति मनुष्यत्वञ्चं राजसाः।
तिर्यक्त्वं तामसा नित्यमित्येषा त्रिविधा गति।।
(मनु० १८-४०)

स्थावराः कृमिकीटाश्चप मत्स्याः सर्पाश्च कच्छपाः।
पशवश्च मृगाश्चैव जघन्या तामसी गतिः।।
(मनु० १२-४२)

इन्द्रियाणां प्रसंगेन धर्मस्यासेवनेन च।
पापान्संयान्ति संसारानविद्वांसो नराधमाः।।
(मनु० १२-५२)

अर्थात जो मनुष्य सात्विक है वे देव अर्थात विद्वान, जो रजोगुणी होते हैं वे मध्यम मनुष्य और जो तमोगुणयुक्त होते हैं वे नीच गति को प्राप्त होते हैं।

जो अत्यन्त तमोगुणी हैं वे स्थावर वृक्षादि, कृमि, कीट, मत्स्य, सर्प, कच्छप, पशु और मृग के जन्म को प्राप्त होते हैं।

जो अपनी इन्द्रियों के वश में होकर विषयीः धर्म को छोड़कर अधर्म करने हारे अविद्वान हैं वे मनुष्यों में नीच जन्म बुरे-बुरे दु:ख रूप जन्म को पाते हैं।

सम्पूर्ण कर्म फल व्यवस्था को केवल परमात्मा ही जानते हैं क्योंकि वे न्यायकारी और सर्वज्ञ हैं। जैसे वे जाति जीवन के कर्मो के अनुसार देते हैं वैसे ही आयु और भोग भी। आयु कर्म फल के आधार पर मिलती है इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि व्यक्ति की आयु निश्चित है या जिस घड़ी जिस पल उसने मरना है उसी घड़ी व उसी पल मरना ही है बल्कि इसका भाव है कि जैसी जाति मिलेगी वैसी ही उसे आयु भी मिलेगी जैसे मनुष्य की आयु सामान्यतः सौ वर्ष, गाय घोड़ादि पशुओं की पच्चीस वर्ष, तोता-चिड़िया आदि पक्षियों की दो या चार वर्ष---आदि। उसी जाति के अनुकूल जीव को भोग भी मिलेंगे अर्थात प्रत्येक जाति का अपना अलग-अलग भोजनादि हुआ करता है-यही कर्म के आधार पर भोगादि मिलने का आशय है।

अमृत पद प्राप्ति (पृष्ठ २३ का शेष)

की प्रबल इच्छा होती है उसकी प्राप्ति में फिर देर नहीं लगती। योग दर्शन में कहा है-

तीव्र संवेगानामापन्नः।।

जिनके अंदर उत्कट भावना होती है उनके लिए लक्ष्य प्राप्ति समीप हो जाती है। कहावत प्रसिद्ध है- 'जहां चाह वहां राह' जिस व्यक्ति की इच्छाशक्ति प्रबल होती है, उसके लिए रास्ते भी निकल आते हैं।

अमृत पद की प्राप्ति के लिए भी प्रबल इच्छाशक्ति की जरूरत है। ऐसी इच्छा शक्ति कि जिस के सम्मुख सब भौतिक सुख गौण हो जाएं। बड़ी-बड़ी बाधाएं उसे अपने उद्देश्य से विचलित न कर सकें। उसका एक ही ध्येय हो-

कार्यं वा साधयेयं देहं वा पातयेयम्

लक्ष्य की सिद्धि करूँगा अथवा इस शरीर का अंत कर दूंगा। ऐसे दृढ़संकल्प व्यक्ति के लिए ही कहा गया है-

मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दुःखं न च सुखम्।

इस प्रकार का तेजस्वी और मनस्वी पुरुष किसी भी दुःख और सुख की परवाह नहीं करता है।

अरुण ऋषि ने कहा- संसार की सामान्य वस्तुओं की प्राप्ति भी बिना कुछ तप व कष्ट सहने के बिना नहीं होती, तब अमृत पद जैसा जन्म जन्मांतरों के बाद प्राप्त होने वाला लक्ष्य भी समय, साधना और सतत एकनिष्ठ भावना के बिना कैसे उपलब्ध हो सकता है। इसी का नाम मुमुक्षत्व है। योग दर्शन के शब्दों में- 'सा तु दीर्घकाल नैरन्तर्य सत्कारासेवितो दृढ़भूमिः।' अमृत पद की दृढ़ नींव तभी रखी जा सकती है जब साधक लंबे से लंबे समय तक निरंतर और श्रद्धापूर्वक इन नियमों का पालन करता है।

यह साधनचतुष्टय एक दूसरे के साथ सर्वथा संश्लिष्ट है। एक को छोड़कर दूसरे का अवलंबन नहीं किया जा सकता। इन चारों को एक साथ ही जीवन में ढ़ालना होगा। इनके बीच किसी प्रकार की भिन्नता की दीवारें नहीं हैं। आत्मा रूपी भूमि को समतल बनाकर साधक जब चारों प्रकार के कदमों को एक साथ उठाएगा, तब निश्चय ही उसका प्रत्येक पग अमृत पद की ओर प्रेरक होगा।

इसी तत्त्व को पुष्ट करते हुए अरुण ऋषि ने पिप्पलाद ऋषि के ये शब्द सुनाए-

तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया विद्यया आत्मानं अन्विष्यत।। प्रश्नोपनिषद् में आत्म ज्ञान के चार साधन बताये-

(१) तप, महाभारत में तप का लक्षण किया गया है- स्वधर्मवर्तित्वं तपः। अपने धर्म, कर्तव्य का पालन तप है।

(२) ब्रह्मचर्य, अर्थात् इन्द्रिय संयम।

(३) श्रद्धा- भगवान के न्याय, वेद और आप्त जनों के वाक्यों और अपनी आत्मशक्ति पर पूरा विश्वास रखना श्रद्धा है।

(४) विद्या- इस भौतिक सृष्टि का ज्ञान और इसके द्वारा आध्यात्मिक जगत का ज्ञान विद्या है।

इन साधनों का निर्देशन प्राप्त करने के लिए गुरु की सेवा में जाना चाहिए। पर गुरु कैसा हो?

परीक्ष्य लोकान् कर्मचितान् ब्राह्मणो निर्वेद मायान्नात्यकृतः कृतेन। तद् विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्।। (मुण्डकोपनिषद्)

सब संसार को अच्छी तरह देख व समझकर विद्वान् पुरुष वैराग्य की भावना को प्राप्त करे। वह यह समझे कि किए हुए कर्म का फल बिना भोगे नहीं रहा जा सकता। पर इस तत्त्व ज्ञान को जानने के लिए हाथ में समिधा लेकर वह वेदज्ञ और ब्रह्म में संलग्न गुरु के पास जाए।

समिधा लेकर क्यों जाए? अन्य कोई पुष्प, फल व सांसारिक वस्तु लेकर क्यों न जाए? इस शंका का उत्तर देते हुए अरुण ऋषि ने कहा- पहली बात तो यह कि समिधा ऋषि मुनियों के यज्ञ में काम आ सकती है। पुष्प-पत्र किस काम आ सकते हैं! दूसरी बात यह है कि जिस प्रकार समिधा वृक्ष से कटकर दोबारा वहाँ जाकर नहीं लग सकती, इसी प्रकार जिज्ञासु यह कहता है कि 'गुरुवर मैं संसार से पूर्ण रूप से विरक्त होकर आया हूँ। अब संसार के प्रलोभन मुझे दोबारा अपनी ओर नहीं खींच सकते हैं। अब मैं इस आत्मज्ञान के मार्ग से विचलित नहीं होऊँगा।' इस प्रकार जिसे ब्रह्मनिष्ठ और श्रोत्रिय गुरु मिल जाये, निश्चय ही उसका जीवन सफल हो जाएगा।

पाठक! उठो और जागो! इस अमृत पथ की ओर अपने पग बढ़ाने के लिए दृढ़संकल्प हो जाओ। प्रभु की साक्षी करके हृदय में मजबूती के साथ गांठ बांधो और प्रतिदिन प्रातः सायं शुद्ध भाव से कहो-

'भगवन्! यह दुर्लभ मानुष जन्म तुम्हारी असीम अनुकंपा से ही मुझे मिला है। मेरे जीवन का प्रत्येक क्षण तुम्हारे समीप जाने के प्रयत्न की दिशा में बढ़े, मेरे जीवन की प्रत्येक चेष्टा तुम्हारी अजस्र ज्योति की ओर प्रेरणा देने वाली हो और मेरे जीवन की प्रत्येक घड़ी अमृतपद प्राप्ति के प्रयत्न में व्यतीत हो। प्रभो! मैं इस विश्व को अमृत सागर समझूँ। अमृत धाम तक पहुंचने के लिए इस मानव तन को अमृत सेतु समझूँ और अपने जीवन से प्रतिपल चारों ओर अमृतकण बिखेरूँ। दीनबंधो! तुम अमृतमय हो और मैं अमृत-पुत्र बनने की योग्यता प्राप्त करूँ, यही एकमात्र कामना है।'

बिन्दु बिन्दु विचार संकलन

❐भलेराम आर्य, सांघी वाले 9416972879

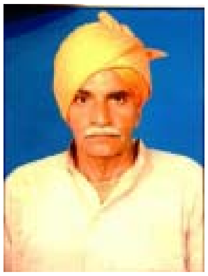

❖तुच्छ सहायकों के साथ भी प्रेम और समता का व्यवहार करना चाहिए।

❖यदि एक व्यक्ति उन्नति कर रहा है तो उसे देखकर जलना नहीं, यही सच्ची ध ार्मिकता है।

❖जिसको अपने कर्त्तव्य कर्मों का बोध है, वही सच्चा ज्ञानी है।

❖ईश्वर को वही प्राप्त कर सकता है जो दानशील है।

❖मूर्ख लोग अपनी संगति में तुझे नष्ट न कर दें, अतः तू उनका संग छोड़ दे।

❖जो दूसरों को तारने वाले हैं, परोपकार करने वाले हैं, उजड़ों को बसाने वाले हैं, वे ही संसार में विजय प्राप्त करते हैं।

❖संकल्प शक्ति से प्रत्येक कामना पूर्ण रूप से सिद्ध हो जाती है।

❖जो व्यक्ति गतिशील नहीं है-प्रगतिशील नहीं है, वह शरीरधारी होते हुए भी मरे हुए के समान है।

❖किसी व्यक्ति का स्वाध्याय, चिन्तन तथा लेखन-कर्म उसके व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं।

❖जो व्यक्ति अपने देश के महापुरुषों का सम्मान नहीं करता, उससे और क्या आशा की जा सकती है?

❖प्रगतिशील-राष्ट्रवादी नागरिक की प्रगति को कोई नहीं रोक सकता।

❖मन, वचन और कर्म से किसी भी प्राणी के प्रति वैर की भावना न रखना सच्ची अहिंसा है।

पितृ पक्ष पर एक मार्मिक कविता

रहे सदा जीवन भर जग में, तुम मेरी पहचान पिता।
कहाँ चुका पातीं जीवन भर, इस ऋण को संतान पिता।।

चले तुम्हारी अंगुली थामे, हम पथरीली राहों पर,
बिना तुम्हारे वे सब रस्ते, रह जाते अनजान पिता।।

मेरे तुतलाते बोलों ने अर्थ तुम्हीं से पाया था,
मेरी बीमारी में अक्सर बन जाते लुकमान पिता।।

गुरु ,जनक, पालक, पोषक, रक्षक तुम भाग्यविधाता भी
मोल तुम्हारा जान न पाए, हम ऐसे नादान पिता।।

अपनी, आँखों के तारों का, आसमान थे सचमुच तुम,
सौ जन्मों तक नहीं चुकेगा, हमसे यह एहसान पिता।।

तुम माँ के माथे की बिंदिया, और हमारा संबल थे,
बिना तुम्हारे माँ के संग हम, रो-रो कर हलकान पिता।।

जिनके कंधे चढ़ कर हमने जग के मेले देखे थे,
अपने कांधे तुम्हें चढ़ा कर, छोड़ आये शमशान पिता।।

इन्टरनेट से प्राप्त/अज्ञात कवि की रचना/रचनाकार को नमन आभार सहित

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक सहदेव द्वारा प्रियंका प्रिंटर्स, जींद के लिए ऑटोमैटिक ऑफसैट प्रैस रोहतक से छपवाकर, कार्यालय शान्तिधर्मी ७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक), जीन्द-१२६१०२ (हरि०) से प्रकाशित। सम्पादक : सहदेव

किनाना जिला जींद में इण्डस डिफेंस अकेडमी के उद्घाटन के अवसर पर वृक्षारोपण करते हुए श्री अमित खत्री उपायुक्त जींद, शिलान्यास करते हुए उपायुक्त व अन्य गणमान्य।

महर्षि दयानन्द शिक्षण केन्द्र झज्जर में आयोजित यज्ञ व सम्मान समारोह के दृश्य

ग्राम बीकानेर गंगायचा में प्रो० धर्मवीर आर्य के आवास पर श्रीष्ण जन्माष्टमी आयोजन में स्वामी जीवानन्द नैष्ठिक, प्रो० धर्मवीर जी एवं अशोक कमार आर्य जी।

आर्यसमाज टटीरी जिला बागपत की नवीन तदर्थ कार्यकारिणी के पदाधिकारी गण का समूह चित्र

जींद में संस्कार भारती व मनुराज प्रकाशन द्वारा आयोजित कवि सम्मेलन में कविता पाठ करते हुए सहदेव समर्पित

शांतिधर्मी परिसर में आयोजित पूर्णमा यज्ञ व सत्संग समारोह में आहुति प्रदान करते हुए श्रद्धालुगण

शांतिधर्मी एक अद्वितीय पत्र है

इसमें परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिये स्वस्थ और सुरूचिपूर्ण सामग्री होती है।

- ☆ **शांतिधर्मी** में धर्म-दर्शन के रहस्य, राष्ट्र व समाज की ज्वलंत समस्याओं पर अधिकारी विद्वानों के श्रेष्ठ विचार होते हैं।
- ☆ **शांतिधर्मी** भारतवर्ष के गौरवपूर्ण इतिहास की झलक दिखाता है।
- ☆ **शांतिधर्मी** वह मार्ग दिखाता है, जिसे पाने के लिये लोग भटक रहे हैं। परिवार में समाज में सह-अस्तित्व व अन्तरात्मा में सुख शांति का सन्देशवाहक है।
- ☆ **शांतिधर्मी** उस अध्यात्म का प्रचार करता है-जिसे अपनाने में देश-काल, जाति, मजहब, सम्प्रदाय की सीमाएँ आड़े नहीं आतीं। यह सच्चे ईश्वरीय ज्ञान का प्रचारक है।
- ☆ **शांतिधर्मी** स्वाध्याय भी है और स्वस्थ मनोरंजन का साधन भी।
- ☆ **शांतिधर्मी** प्रत्येक श्रेष्ठ-धार्मिक-राष्ट्रप्रेमी-मानवतावादी-व्यक्ति के लिये एक विचार-सूत्र है। प्रत्येक श्रेष्ठ परिवार का आभूषण है।

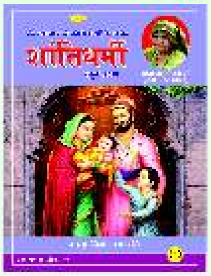

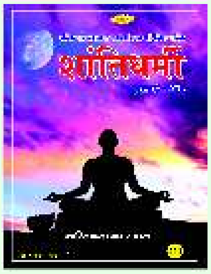

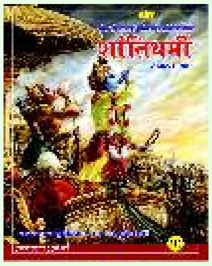

शांतिधर्मी पढ़िये-

अपने प्रति, समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति, ईश्वर के प्रति सर्वांगीण दायित्वों को जानिये।

जीवन के जटिल व गूढ़ रहस्यों को सहज ही सुलझाईये।

मूल्य : एक प्रति : 10.00 वार्षिक : 120.00 आजीवन : 1000.00

शान्तिधर्मी कार्यालय
756/3, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक)
जीन्द-126102 (हरियाणा)
फोन 9416253826, 9996338552
E-mail : shantidharmijind@gmail.com